पूर्वांचल खेती

वर्ष : 33 फरवरी 2023 अंक : 02

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

वर्ष 33 | फरवरी 2023 | अंक 02

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. ए. पी. राव

निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

सम्पादक मण्डल

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

सूरजमुखी की उन्नतशील खेती 01
सर्वजीत एवं ओम प्रकाश

बाजरा की उन्नत खेती 02
उमेश बाबू एवं राम भरोसे

जायद एवं खरीफ दलहन उत्पादन की उन्नत तकनीक 04
के. एम. सिंह एवं अरूण कुमार

जायद में मिश्रित हरा चारा उत्पादन 08
ए. के. सिंह एवं आर. सी. वर्मा

करेला उत्पान की अद्यतन प्रौद्योगिकी 10
प्रमोद कुमार सिंह एवं अंकिता गौतम

कृषक आय संवर्धन में नैनो उर्वरकों की भूमिका 13
नंदन सिंह एवं शैलेन्द्र सिंह

जलजीव पालन में नवीनतम तकनीकी प्रगति 15
शशांक सिंह एवं ए पी राव

संतुलित आहार में श्री अन्न फसलों की उपयोगिता 16
हनुमान प्रसाद पाण्डेय एवं रितेश सिंह गंगवार

सरसों की फसल में कीट एवं रोग प्रबंधन 20
हिमांशु शेखर सिंह एवं वी. पी सिंह

फल व सब्जियों की तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन से करे किसान भाई आय में वृद्धि 22
रेनू सिंह एवं शैलेश कुमार सिंह

अन्तरावस्था काल के दौरान दुधारू पशुओं की सरल प्रबंधन रणनीतियां 24
अमित कुमार सिंह एवं संजीत कुमार

फरवरी माह में किसान भाई क्या करें 26

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 27

बॉक्स सूचनाएं

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये 25

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/प्रभारी अधिकारी	दूरभाष कार्यालय	मोबाइल
1.	वाराणसी	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	05542–248019	9415687643
2.	बस्ती	डॉ. डी.के. श्रीवास्तव	05498–258201	9839403891
3	बलिया	डॉ. सोमेन्दु नाथ प्रभारी	–	8948044062
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	05278–254522	9415188020
5.	मऊ	डॉ. एल. सी. वर्मा	0547–2536240	7376163318
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	0541–2260595	9458362153
7.	बहराइच	डॉ. विनायक शाही	05252–236650	8755011086
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	–	9415155518
9.	आज़मगढ़	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	–	9455501727
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	–	7839325836
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	–	9984369526
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. ओम प्रकाश	05541–241047	9452489954
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	–	9415450175
15.	बलरामपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	–	9450885913
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	–	9918622745
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	–	9415039117
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	–	9838952621
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. के. एम. सिंह	–	9307015439
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. पी.के. मिश्रा प्रभारी	–	9936645112
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. वी.पी. सिंह	–	9839420165
22.	अमिहित–जौनपुर	डॉ. संजीत कुमार	–	9837839411
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	–	9411320383
24.	श्रावस्ती	डॉ. विनय कुमार	–	–
25.	आजमगढ़ द्वितीय	डॉ. डी.के. सिंह	–	9456137020

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. ए. पी. राव.	9415720376	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. नितेन्द्र प्रकाश	9026289336	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. एस. के. सिंह	8787289358	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

भारतीय कृषि में लघु व सीमांत किसानों की हिस्सेदारी काफी ज्यादा है। ऐसी स्थिति में कृषकों के इस कार्य के लिये खेती से आर्थिक व्यवस्था को दुरूस्त करने के साथ अपने परिजनों के लिये संतुलित भोजन सीमित संसाधनों में उपलब्ध कराना एक चुनौती है। इन परिस्थितियों के दृष्टिगत छोटी जोत में भी खाद्यान्न, तिलहन, दलहन, सब्जी के साथ परिवार की आवश्यकता के लिये दुग्ध उत्पादन करना एक सफल कृषि कही जा सकती है।

उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए पत्रिका के इस अंक में दलहन, तिलहन, सब्जी व पशुपालन की आधुनिक तकनीकों के समन्वय से लेख प्रस्तुत है आशा है पत्रिका का यह अंक हमारे कृषक भाईयों के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

(ए.पी. राव)

सूरजमुखी की उन्नतशील खेती

सर्वजीत* एवं ओम प्रकाश**

सूरजमुखी खेती तिलहनी फसल के रुप में खरीफ रबी एवं जायद तीनों मौसम में की जा सकती है। इसका तेल खाने और औषधीय रुप में प्रयोग करते हैं। सूरजमुखी के बीजों/तेल को खाने से हार्टअटैक का खतरा कम रहता है। दिल को स्वस्थ रखने से लेकर यह कैसर जैसी बीमारी से बचाव करता है। इसके अतिरिक्त सूरजमुखी का तेल लीवर की बीमारियों को कम करता है।और हड्डियों की बीमारी को भी दूर करता है। इसके बीज न केवल स्वादिष्ट होते हैं। बल्कि पौष्टिक भी होते हैं। इसके खली को पशुओं को खिलाने में प्रयोग करते हैं। खरीफ में सूरजमुखी पर अनेक रोग एवं कीटों का प्रकोप होता है। इसलिए जायद में सूरजमुखी की खेती से अथिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

विश्व में करीब 20 मिलियन हे0 क्षेत्रफल में सूरजमुखी की खेती की जाती है। इससे कुल उत्पादन 27 मिलियन टंन होता है। सूरजमुखी के प्रमुख उत्पादक देश रुस, युक्रेन, आर्जटीना हैं। भारत में 15 लाख हे0 क्षेत्रफल में सूरजमुखी की खेती की जाती है। और लगभग 90 लाख, टंन उत्पादन होता है। भारत में सूरजमुखी की औसत उत्पादकता 7 कुन्तल प्रति हे0 है।

जलवायु:– सूरजमुखी समशीतोष्ण तथा शीतोष्ण जल वायु का पौधा होता है। फसल पकते समय शुष्क जलवायु की आवश्यकता पड़ती है।

भूमि:– सूरजमुखी की खेती सभी प्रकार की भूमियों में की जा सकती है। अम्लीय एवं क्षारीय भूमि को छोड़कर सिचित दशा वाली दोमट भूमि उपयुक्त होती है।

खेत की तैयारी :– जायद के मौसम में पर्याप्त नमी न होने पर खेत को पलेवा करके जुताई करनी चाहिए। एक जुताई मिट्टी पलट हल से तथा बाद में 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए । मिट्टी भुरभुरी कर लेनी चाहिए ।

प्रजातियाँ :– प्रजातिया दो प्रकार की होती हैं।

संकुल –मार्डन, सूर्या, ज्वालामुखी, सनजीन–85, PSFH-118, PSH-569,DRSF-108

हाइब्रिड – KBSH-1, KBSH-44, APSH-11, BSF-1, MSFH-8, 9, 17, SH-3322

बुवाई का समय एव विधि जायद में सूरजमुखी की बुवाई का सर्वोत्तम समय फरवरी का दूसरा पखवाड़ा है। इस समय बुवाई करने पर फसल मई के अन्त तक या जून के प्रथम सप्ताह तक तैयार हो जाती है। बुवाई देर से करने पर पकते समय वर्षात आरम्भ हो जाता है। और पैदावार घट जाता है। बुवाई हमेशा पंक्ति में करनी चाहिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 बउ पौधे से पौधे की दूरी 15 सेमी बीज की बुवाई 4–5 सेमी की गहराई पर करनी चाहिए।

बीज दर :– बीज की मात्रा सामान्य प्रजातियों में 12–15 किग्रा/हे0 संकर प्रजातियों में 5–6 किग्रा/हे0 बीज लगता है। बीजो को बुवाई से पहले 2–2.5 ग्रा0 थीरम/किग्रा के दर से उपचारित करना चाहिए बीज को बुवाई से पहले 12 घंटे भिगोकर सुबह 3–4 घंटे छाया में सुखाकर 3 बजे के बाद बुवाई करते हैं। इससे जमाव शीघ्र होता है। बुवाई से पहले बीज उपचार बहुत ही आवश्यक है। कार्बेन्डाजिम 2 ग्रा0 या थीरम 2.5 ग्रा0 प्रति किलो ग्रा0 बीज की दर से उपचारित करते हैं।

उर्वरक प्रयोग:– सामान्यतः उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर ही करना चाहिए। संकुल प्रजातियों में 80 किग्रा संकर प्रजातियों में 100 किग्रा नाइट्रोजन, 60 किग्रा फास्फोरस, 40 किग्रा पोटाश प्रति हे0 पर्याप्त होता है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा एवं फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई के समय कूड़ो में प्रयोग करना चाहिए शेष नाइट्रोजन की मात्रा बुवाई के 25–30 दिन बाद खड़ी फसल में देनी चाहिए। यदि 3 – 4 टन हे0 गोबर की सड़ी हुई खाद प्रयोग की जाये तों उपज आधिक प्राप्त होती है।

सिंचाई :– जायद में अच्छी पैदावार लेने के लिए 4 –

(शेष पृष्ठ 07 पर)

*विषय वस्तु विशेषज्ञ– बीज विज्ञान, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, **कृषि विज्ञान केंद्र सोहना, सिद्धार्थनगर
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्व विद्यालय कुमारगंज अयोध्या– 224229

बाजरा की उन्नत खेती

उमेश बाबू* एवं राम भरोसे**

खरीफ के अलावा जायद में भी बाजरा की खेती सफलतापूर्व की जाने लगी है, क्योंकि जायद में बाजरा के लिए अनुकूल वातावरण जहॉ इसके दाने के रूप में उगाने के लिए प्रोत्साहित करता है वहीं चारे के लिए भी इसकी खेती की जा रही है। सिंचाई की जल की समुचित व्यवस्था होने पर आलू, सरसों, चना, मटर के बाद बाजरा की खेती से अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है।

1. भूमि का चुनाव– बलुई दोमट या दोमट भूमि बाजरा के लिए अच्छी रहती है। भली भॉति समतल व जीवांश वाली भूमि में बाजरा की खेती करने से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

2. भूमि की तैयारी – पलेवा करने के बाद मिट्टी पलटने वाले हल से 10–12 सेमी. गहरी एक जुताई तथा उसके बाद कल्टीवेटर या देशी हल से दो तीन जुताइयॉ करके पाटा लगाकर खेत की तैयारी कर लेनी चाहिए।

4. बुवाई का समय – बाजरा की बुवाई मार्च के प्रथम सप्ताह से अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक की जा सकती है। बाजरा एक परागित फसल है तथा इसके परागकण 46 डिग्री. तापमान पर भी जीवित रह सकते है व बीज बनाते हैं।

5.बीज दर– दाने के लिए 4–5 किलोग्राम प्रति हे. पर्याप्त होता है बीज को 2.5 ग्राम थीरम या 2.0 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा. की दर से शोधित कर लेना चाहिए।

6.बुवाई की विधि– बाजरा की बुवाई लाईन में करने से अधिक उपज प्राप्त होती है। बुवाई में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. रखनी चाहिए।

7.उर्वरकों का प्रबन्धन– उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण से प्राप्त संस्तुतियों के आधार पर करें। मृदा परीक्षण की सुविधा उपलब्ध न हो तो संकुल प्रजातियों के लिए 60 किलोग्राम नत्रजन, 40 किलोग्राम फास्फोरस तथा 40 किलोग्राम पोटाश तथा संकर प्रजातियों के लिए 80 किग्रा. नत्रजन, 40 किग्रा. फास्फोरस तथा 40 किग्रा. पोटाश प्रति हे. प्रयोग करना चाहिए। फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा बेसल ड्रेसिंग के रूप में बुवाई के समय तथा नत्रजन की आधी मात्रा टापड्रेसिंग के रूप में बुवाई के 20–25 दिन बाद खेत में पर्याप्त नमी होने पर प्रयोग करनी चाहिए। यदि पूर्व में बोयी गयी फसल में गोबर की खाद का प्रयोग न

प्रजातियां– बाजरा की उन्नतिशील प्रजातियां

संकुल	प्रजाति	पकने की अवधि (दिन)	ऊंचाई (सेमी.)	दाने की उपज (कु0हे.)
	आई.सी.एम.वी.–221	75–80	200–225	20–22
	आई.सी.टी.पी.–8203	80–85	180–190	18–20
	राज–171	80–85	190–210	20–25
	पूसा कम्पोजिट–383	80–85	190–210	20–25
संकर	एम–52	78–82	170–180	28–30
	जी.एच.बी.–526	80–85	170–180	28–30
	पी.बी.–180	80–85	180–190	28–30
	जी.एच.बी.–558	75–80	170–180	28–30

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (जी.पी.बी.), **विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान) कृषि विज्ञान केन्द्र श्रावस्ती
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय कुमारगंज अयोध्या– 224229

किया गया हो तो 5 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर देने से भूमि का स्वास्थ्य भी सही रहता है तथा उपज भी अधिक प्राप्त होती है। बीज को नत्रजन जैव उर्वरक–एजोस्प्रीलिनम तथा स्फूर जैव उर्वरक–फास्फेटिका द्वारा उपचारित कर बोने से भूमि के स्वास्थ्य में सुधार होता है तथा उपज भी अधिक मिलती है। आलू के खेत में बाजरा बोने से उर्वरकों की मात्रा को 25 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है।

8. बिरलीकरण (थिनिंग) गैप फिलिंग– बुवाई के 15–20 दिन बाद सांय के समय खेत में पर्याप्त नमी होने पर घने पौधों वाले स्थान के पौधों को उखाड़ कर कम पौधे वाले स्थान पर रोपित कर देना चाहिए तथा पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. कर लेना चाहिए तथा रोपित पौधे किये गये पौधों में पानी लगा देना चाहिए।

9.सिंचाई– जायद में बाजरा की फसल में 4–5 सिंचाइयॉ पर्याप्त होती है। 15–20 दिन के अन्तर से सिंचाई करते रहना चाहिए। कल्ले निकलते समय व फूल आने पर खेत में पर्याप्त नमी आवश्यक है।

खरपतवार नियंत्रण निकाई–गुड़ाई– खरपतवारों पर नियंत्रण के लिए बुवाई के बाद जमाव से पूर्व एट्राजीन 0.5 किग्रा./हे. की दर से 700–800 लीटर पानी में घोलकर एक छिड़काव समान रूप से करना चाहिए। खरपतवार दिखाई देने पर निकाई के बाद गहरी गुड़ाई करने से खरपतवारों पर नियंत्रण के साथ–साथ नमी का संरक्षण भी हो जाता है।

10. फसल सुरक्षा– बाजरा एक तेजी से बढ़ने वाली फसल है तथा जायद में बोने पर कीट तथा रोग का प्रभाव भी कम होता है। रोग से रोकथाम के निम्न उपाय है।

अरगट– लक्षण–यह फफूँदी से उत्पन्न होने वाला रोग है। इसके लक्षण बालों पर दिखाई देते है। इसमें दाने के स्थान पर भूरे काले रंग से सींक के आकार की गांठे बन जाती है। संक्रमित फूलों में फफूँदी विकसित हो जाती है। रोग ग्रसित दाने मनुष्यों एवं जानवरों के स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद होते हैं।

रोकथाम–

रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का चयन किया जाय – शोधित बीज का प्रयोग करें यदि बीज उपचारित नहीं है तो 20 प्रतिशत नमक के घोल में बीज को डालने पर प्रभावित बीज फफूँदी तैर कर ऊपर आ जाएगी। जिन्हें हटाकर नीचे का शुद्ध बीज लेकर साफ पानी से 4–5 बार धोकर एवं सुखाकर प्रयोग करें।

कण्डुआ–लक्षण–यह फफूँदी जनित रोग है। बालियों में दाना बनते समय रोग के लक्षण दिखाई देते हैं। रोग ग्रसित दाने बड़े, गोल या अण्डाकार हरे रंग के दिखाई देते है बाद में दानों के अन्दर काला चूर्ण भरा होता है।

रोकथाम– बीज शोधित करके बोना चाहिए। एक ही खेत में प्रति वर्ष बाजरा की खेती नहीं करनी चाहिए। रोग ग्रसति बालियों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। रोग की संभावना दिखते ही फफूँदी नाशक जैसे कार्बेन्डाजिम या कार्बाक्सिन की 1.0 किग्रा. मात्रा को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हे. की दर से 8–10 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

मृदुरोमिल आसिता व हरित बाल रोग–

लक्षण– रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियॉ पीली पड़ जाती है तथा निचली सतह पर फफूँदी की हल्के भूरे रंग की वृद्धि दिखाई देती है। पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा बालियों के स्थान पर टेड़ी मेड़ी गुच्छेनुमा हरी पत्तियॉ सी बन जाती है।

रोकथाम– रोग प्रतिरोधी प्रजातियों का चयन किया जाय। बीज को शोधित करके बुवाई की जाय। सर्वोगी फफूँदी नाशक जैसे कार्बेन्डाजिम या कार्बाक्सिन 1.00 किग्रा. मात्रा को 800–1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति.हे. की दर से 8–10 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करना चाहिए।

जायद एवं खरीफ दलहन उत्पादन की उन्नत तकनीक

के. एम. सिंह* एवं अरूण कुमार*

देश की बढ़ती जनसंख्या, घटती जोत, बढ़ते हुए फसल उत्पाद लागत मूल्य, उत्पादन के दौरान जोखिमों, खरपतवारों का प्रकोप व रोग–कीट प्रकोप के कारण देश में दलहन का उत्पादन काफी कम हो रहा है जिसके परिणामस्वरूप दालों की कीमत आसमान पर पहुँच गयी है। जिसके कारण दालें आम आदमी की पहुँच से दूर हो गयी है। भारत क्षेत्रफल की द्रष्टि से विश्व में प्रथम स्थान पर है। देश दालों का मुख्य उत्पादक होने के कारण दालो का आयात भी नहीं कर सकता है। दालें हमारे जीवन में प्रोटीन उपलब्ध कराने की मुख्य स्रोत होती है। उक्त समस्याओं को ध्यान में रखते हुये भारत सरकार (आई. सी.ए.आर.) द्वारा वर्ष 2010 से हार्नेसिंग पल्स प्रोडक्टिविटी कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

मुख्य उद्देश्य :

1. दलहनी फसलों की औसत उत्पादन में वृद्धि।
2. दालों के उपलब्धता में वृद्धि।
3. दालों के बढते दामो में लगाम।
4. किसानों के समेकित तकनीकी ज्ञान में वृद्धि।
5. कृषि तकनीक को कृषको के यहॉ बृहद क्षेत्रफल में प्रदर्शन आयोजन कर उत्पदाकता एवं औसत उत्पादन में फासला कम करना।

बीजः– बीज हमेशा प्रमाणित अथवा आधारीय बीज ही प्रयोग करें।

बीज उपचारः– दलहनी फसलों से अच्छा उत्पादन लेने के लिए आवश्यक है, कि बुवाई करने से पूर्व बीज का उपचार कर लें। बीज उपचार एफ. आई. आर. सिद्धान्त से करते है।

1. फफूंदनाशी द्वाराः

दलहनी फसलों में कई बीज जनित बीमारी, जड़ गलन एवं उकठा बीमारियां लगती है, जिनके नियन्त्रण हेतु बीजोपचार करते है। बीज उपचारण के लिए 2.5 ग्राम कार्बन्डाजिम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करते है। बीज उपचारण हेतु बीज को बीज उपचारित करने वाले ड्रम अथवा घड़े में डालकर उपचारित कर लेते है।

2. कीटनाशी द्वाराः

दलहनी को शुरूआती कीटों के प्रकोप से नियन्त्रण के लिए कीटनाशी दवा से उपचारित करते है। बीजउपचार हेतु 2.5 मिली इमिडाक्लोप्रिड या 4 मिली क्लोरपाइरीफॉस प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित कर देते है।

3. जैविक कल्चर द्वाराः

बीज को जैविक द्वारा उपचारित करने के लिए 10 ग्राम जैविक कल्चर (राइजोवियम प्रजाति) प्रति किग्रा बीजदर गुड़ द्वारा तैयार ठण्डी चासनी में घोलकर बीज के ऊपर फैलाकर हाथों से भलीभॉत मिला देते है। इसके उपरान्त बीज को छायादार स्थान में सुखाकर बुवाई में प्रयोग करते है।

भूमि शोधनः–दलहन में उकठा, जड़ गलन बीमारी एवं दीमक के नियन्त्रण हेतु ट्राइकोडर्मा बिरडी या स्युडोमोनास स्पेशीज की 4 से 5 किग्रा एवं ब्युबेरिया बेसियाना 4 से 5 किग्रा प्रति हेक्टेअर की दर से 2 से 3 कुन्तल कम्पोस्ट खाद में 24 से 48 धन्टे पूर्व अलग – अलग मिला कर छायादार स्थान में रखें। इसके उपरान्त उपचारित कम्पोस्ट को आखरी जुताई के समय मिला दें।

बुवाई विधिः–दलहन से अच्छे उत्पादन के लिए बुवाई लाइन में करना चाहिए। लाइन में बुवाई हल के पीछे अथवा सीडड्रिल के माध्यम से करें। यदि फर्ब्स विधि से की जाए तो पैदावार अधिक मिलती है।

बिरलीकरणः–बुवाई के लगभग 15–20 दिन बाद पौधों से पौधों की दूरी, सधन पौधों को निकालकर निश्चित कर देनी चाहिए।

उर्वरक प्रयोगः–दलहन के अच्छे उत्पादन लेने के लिए 15–20 किग्रा नत्रजन, 40 किग्रा फास्फोरस, 40 किग्रा पोटाश एवं 20 किग्रा सल्फर की प्रति हेक्टेयर

*के.वी.के., नानपारा, बहराइच, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्व विद्यालय कुमारगंज अयोध्या– 224229

आवश्यकता होती है।

नत्रजन को स्थिरीकरण करने वाले बैक्टिीरिया– राइजोबियम प्रजाति की कार्य दक्षता बढ़ाने के लिए एवं अधिक फलियों व उनमें दानों के लिए दानेदार बोरान 5 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। उर्वरकों का प्रयोग बुवाई के समय लाइनो में बीज से एक से दो सेमी गहराई पर बुवाई करें।

जैविक उर्वरकः–वायुमण्डल की नत्रजन के स्थिरीकरण एवं फॉस्फोरस की उपयोग क्षमता बढ़ाने हेतु राइजोबियम कल्चर – 5 किग्रा एवं पी0एस0बी0 कल्चर 8 किग्रा प्रति हेक्टेअर की दर से 2 से 5 कुन्तल कम्पोस्ट खाद में 24 से 48 धन्टे पूर्व अलग – अलग मिला कर छायादार स्थान में रखें। इसके उपरान्त कल्चर युक्त कम्पोस्ट को आखरी जुताई के समय मिला दें।

खरपतवार प्रबन्धनः– दलहनी फसलों में खरपतवारों का प्रकोप बहुत अधिक होता है, जिसके कारण दलहनी फसलों की पैदावार 20 से 80 प्रतिशत तक उत्पादन में कमी दर्ज की जाती है। अतः खपतवार प्रबन्धन एक अति आवश्यक कार्य है। खरपतवार प्रबन्धन निम्नानुसार करें –

खरपतवारनाशी को 25 लीटर पानी में घोलकर एक स्टाक सोलूशन बना लेते है। फ्लेट फेन बूमनोजल युक्त नेपसेक स्प्रे अथवा ट्रेक्टर चलित स्प्रे मशीन के माध्यम से उक्त जल की मात्रा में घोलकर शाम के समय या ठण्डे मौसम में स्प्रे कर दें।

आवश्यकतानुसार एक या दो निकाई–गुड़ाई करें। पहली निकाई–गुड़ाई बुवाई से तीसरे या चौथे सप्ताह में तथा यदि आवश्यक हो तो दूसरी निकाई–गुड़ाई बुवाई से 40–45 दिन पर करें।

सिंचाई प्रबन्धनः–फसल में पर्याप्त नमी बनाए रखने एवं वर्षा ऋतु में अधिक पानी होने की दशा में जल निकास हेतु जल प्रबन्धन आवश्यक हैं।

जायद मौसम में बुवाई से पूर्व एक पलेवा (Pre Sown Irrigation), पहली सिंचाई बुवाई से 12–15 दिन पर, दूसरी सिंचाई फूल 5 से 10 प्रतिशत आने पर करें। आवश्यकतानुसार फसल सिंचाई करते रहे।

खरीफ सीजन में अधिक लम्बे समय (15 से 20 दिन से अधिक) तक वर्षा न होने पर सिंचाई अवश्य करें। अधिक वर्षा होने की दशा में खेत से पानी निकालने की व्यवस्था कर खेत से पानी निकाल दें। फूल आने की अवस्था पर एक पानी अवश्य लगाएं।

फसल सुरक्षाः– दलहनी फसलों में लगने वाले प्रमुख कीट एवं रोग निम्न है, जिनका उपचार निम्नानुसार कर दलहन से अच्छा उत्पादन प्राप्त करें।

जायद/खरीफ दलहन के प्रमुख कीटः

कमला कीटः

यह कीट पत्तिरयों को खाकर ठूंठ बना देता है।

उपचारः प्रारम्भिक अवस्था में इनके शिशु झुण्ड में हो तो पत्तियों को नष्ट कर देना चाहिए। इनकी रोकथाम निम्न कीटनाशी दवा का स्प्रे या भुरकाव करें।

1. फोलीडाल धूल या फेन्थोएट (2 प्रतिशत) 25 किग्रा प्रति हेक्टेअर या
2. डाईक्लोरोवास 625 मिली प्रति हेक्टेअर
3. डायमेथियोट (30.ई.सी.) 1.25 लीटर प्रति हेक्टेअर

फली छेदकः

इस कीट की सूड़ियां फलियों में छेद करके उनके अन्दर दानों को खा जाती है।

उपचारः

इनकी रोकथाम निम्न कीटनाशी दवा का स्प्रे करें।

1. क्वनालफॉस (25 ई.सी.) 1.25 लीटर या
2. एन.पी.वी. 350 एल.ई. प्रति हेक्टेअर या
3. वैसिलस थ्यूरोजोन्सिस 1 किग्रा प्रति हेक्टेअर या वी.टी. 0.5–1.0 किग्रा/हेक्टेअर
4. निबोली 6 प्रतिशत + 1 प्रतिशत साबुन घोल

फली का रसचूसक कीटः

इन कीटों के वयस्क मत्कुण कीट फलियों का रस चूसकर नुकसान पहुॅचाते हैं।

उपचारः

इनकी रोकथाम के लिये निम्न कीटनाशी दवा से स्प्रे करें।

1. क्यूनालाफास (25 ई.सी.) 1.25 लीटर या
2. मेलाथियान (50.ई.सी.) 1.25 लीटर प्रति हेक्टेअर या

3. डाइमिथोएट (30.ई.सी.) 1.25 लीटर . प्रति हेक्टेअर या
4. वैसिलस थ्यूरोजोन्सिस 1 किग्रा प्रति हेक्टेअर या वी.टी. 0.5–1.0 किग्रा/हेक्टेअर
5. निबोली 6 प्रतिशत + 1 प्रतिशत साबुन घोल

पत्ती लपेटक कीटः

इस कीट की सूड़ियां पीले रंग की होती है जो पौधो की चोटी की पत्तियों को लपेटकर सफेद जाला बुनकर उसी में छिपी पत्तियों को खाती हैं। बाद की अवस्था में फूलों एवं फलियों को भी नुकसान पहुॅचाती हैं।

उपचारः

इनकी रोकथाम के लिये निम्न कीटनाशी दवा का स्प्रे करें।

1. मोनोक्रोटोफॉस (36 एस.एल.) 1.00 लीटर या
2. मेलाथियान (50. ई.सी.) 1.25 लीटर प्रति हेक्टेअर या
3. डाइमिथोएट (30. ई.सी.) 1.25 लीटर प्रति हेक्टेअर

अरहर की फली मक्खीः

फली के अन्दर दाने को खाकर हानि पहुॅचाती हैं।

उपचारः

इनकी रोकथाम के लिये निम्न कीटनाशी दवा को फूल आने के बाद स्प्रे करें।

1. मेलाथियान (50. ई.सी.) 1.25 लीटर प्रति हेक्टेअर या
2. डाइमिथोएट (30. ई.सी.) 1.25 लीटर प्रति हेक्टेअर

जायद/खरीफ दलहन के प्रमुख रोगः

उकठा रोगः

यह रोग फ्यूजेरियम नामक कवक से फैलता हैं। इस रोग से प्रभावित पौधों में पानी व खाद्य पदार्थ का संचार रुक जाता हैं, जिसके कारण पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती हैं। इसमें पौधों की जड़े सड़कर गहरे काले (धूसर) रंग की हो जाती हैं। पौधे की छाल हटाने पर जड़ से लेकर तने की ऊॅचाई तक काले रंग की धारियां पाई जाती हैं। यह रोग अरहर में लगता हैं।

उपचारः

इस बीमारी से बचाने हेतु निम्नानुसार उपचार करें।

क.सं.	फसल	जायद (किग्रा/हे0)	खरीफ (किग्रा/हे0)
1.	अरहर	15–20	15
2.	मूंग	15–18	12
3.	उर्द	15–18	12

1. जिस खेत में उकठा रोग का प्रकोप अधिक हो, उस खेत में 3–4 वर्ष तक अरहर की फसल नहीं लेना चाहिए।
2. ज्वार के साथ अरहर की सहफसल लेने से किसी हद तक उकठा रोग का प्रकोप कम हो जाता हैं।
3. थीरम एवं कार्बेन्डाजिम को 2:1 के अनुपात में मिलाकर 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज उपचारित करके बुवाई करें। या
4. ट्राईकोडर्मा 4 ग्राम तथा 1 ग्राम कार्बाक्सीन प्रति किलोग्राम बीज उपचारित करके बुवाई करें।
5. पूर्व बताए अनुसार भूमि उपचार करके ही बुवाई करें।

अरहर का बन्झारोगः

ग्रसित पौधों में पत्तियां अधिक लगती है, फूल नहीं आते है जिससे दाना नहीं बनता हैं। पत्तियां छोटी तथा हल्के रंग की हो जाती हैं। यह रोग माइट द्वारा फैलता हैं।

उपचारः

1. जिस खेत में अरहर बोना हो उसके आसपास अरहर के पुराने एवं स्वयं उगे हुए पौधे को नष्ट कर दें।

पीला चित्रवर्ण रोग (यलो मोजैक बीमारी):

पत्तियों पर पीले सुनहरे चकत्ते पाये जाते हैं। उग्र अवस्था में सम्पूर्ण पत्ती पीली पड़ जाती हैं। यह रोग सफेद मक्खी से फैलता हैं।

उपचारः

1. इमिडाक्लोप्रिड (78 ई.सी.) 250 मि.ली. प्रति हेक्टेअर या
2. मिथाइल–ओ–डिमेटान (25 ई.सी.) 1.25 लीटर प्रति हेक्टेअर या
3. फॉस्फोमीडॉन 250 (78 ई.सी.) मि.ली. प्रति हेक्टेअर एवं
4. रोग ग्रसित रोगों को उखाड़ कर, जमीन में दवा कर नष्ट कर दें।

पत्तियों का धब्बाः

पत्तियों पर गोलाई लिए हुए कोणीय धब्बे बनते है, जिसमें बीच का भाग हल्के राख के रंग का या हल्का या भूरा तथा किनारा लाल बैंगनी रंग का होता है।

उपचारः

इस बीमारी के नियन्त्रण हेतु निम्न में से किसी एक का स्प्रे करें।

1. कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3.0 किग्रा प्रति हेक्टेअर की दर से 10 दिन के अन्तराल 2–3 छिड़काव करें।
2. कार्बेन्डाजिम 500 ग्राम प्रति हेक्टेअर की दर से स्प्रें करें।
3. थायोफिनेट मिथाइल 500 ग्राम प्रति हेक्टेअर दर से स्प्रें करें।

उत्पादन के मुख्य बिन्दुः

1. रोगरोधी प्रजातियों की बुवाई की जाये।
2. गर्मी में गहरी जुताई करें।
3. पक्तियों में बुवाई करें।
4. बिरलीकरण करें।
5. भूमि उपचार एवं बीज शोधन अवश्य करें।
6. सल्फर एवं फास्फोरस का प्रयोग करें।
7. समेकित खरपतवार प्रबन्धन करें।
8. समेकित कीट व रोग प्रबन्धन करें।

(पृष्ठ 01 का शेष)

5 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। भारी भूमि में 3–4 सिंचाई करनी चाहिए। पहली सिंचाई बोने के 20–25 दिन बाद करनी चाहिए। फूल आते समय एवं दाना भरते समय भूमि में नमी की कमी नही होनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः–निराई गुड़ाई करके खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है इसके अतिरिक्त पेन्डिमेथेलीन 30 प्रतिशत की 3.3 ली0 मात्रा प्रति हे0 के हिसाब से 500–700 ली0 पानी में घोलकर बुवाई के वाद 2–3 दिन के अन्दर छिड़काव करना चाहिए।

मिट्टी चढानाः– खड़ी फसल में नाइट्रोजन की टॉप ड्रेसिग करने के बाद पौधों पर 10–15 सेमी मिट्टी चढ़ा देना चाहिए।

फसल सुरक्षा :– सूरजमुखी में कई प्रकार के कीट लगते हैं। जैसे दीमक हरे फुदके डस्की बग फली बेधक दीमक के नियंत्रण हेतु 2.5 किग्रा व्यूवेरिया वैसियाना को लगभग 70 किग्रा गोबर की खाद में मिलाकर एक सप्ताह छाया में फैलाने के बाद प्रति हे0 की दर से प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त सिंचाई के पानी के साथ क्लोरोपाइरीफास 20 एफसी 2–3 ली0 हे0 की दर से प्रयोग करना चाहिए। हरे फुदके के नियंत्रण हेतु नीम आयल 0.15/ईसी 2.50 ली0 या डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ईसी की 1.0 ली0 मात्रा अथवा इमिडाक्लोप्रिड 250 मिली की दर से 800 ली0 पानी के साथ छिड़काव करें। डस्की बग के नियंत्रण हेतु हरें फुदकों के लिए संस्तुत, रसायन प्रभावी होते हैं। फली बेधक के नियंत्राण हेतु क्यूनालफास 25 : ईसी 2.0 ली0 प्रति ली0 हे0 की दर से 800 ली0 पानी में घोलकर सायंकाल छिड़काव करें।

रोंग नियत्रण :– सूरजमुखी की फसल में डाउनी मिल्डयू हेड राट पत्ती झुलसा रोंग लगते हैं। पत्ती झुलसा रोंग का नियंत्रण हेतु मैन्कोजेब 3 ग्राम प्रति ली0 पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

फसल कटाई :– सूरजमुखी की फसल तब काटी जाती है जब बीज पक कर कड़े हो जाए पत्ते सूख जायें, फूल का पिछला भाग पीला हो जाए फूल की पंखुड़ियाँ झड़ जायें तो फसल तैयार समझना चहिए। इस समय फूल काटकर 3– 4 दिन खलिहान में सुखाने के वाद डंडे से पीटकर बीज निकाल लेना चाहिए। फूलों का कभी ढेर नही लगाना चाहिए। सूरजमुखी की फसल को तैयार होने में लगभग 90–95 दिन का समय लगता है।

उपज एवं भण्डारण :– संकुल प्रजातियों की औसत उपज 12–15 कुन्तल हे0 तथा संकर प्रजातियों की उपज 20–25 कुन्तल हे0 प्राप्त होती है। बीज निकालने के बाद अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। बीज में 8–10 प्रतिशत से अधिक नमी नही होनी चाहिए। बीजों से 3 माह के अन्दर तेल निकाल लेना चाहिए नही तो तेल में कड़वाहट आ जाती है।

जायद में मिश्रित हरा चारा उत्पादन

ए. के. सिंह* एवं आर. सी. वर्मा**

पूर्वांचल में सिंचित खेती में पशुधन का बहुत महत्व है। यहाँ पर पशुधन से दूध मांस उत्पादन के द्वारा किसानों की आय में वृद्धि हुई है। यहाँ का मध्यमवर्गीय किसान दुग्ध उत्पादन के द्वारा अच्छी आय प्राप्त कर रहा है एवं लघु तथा सीमान्त किसान बकरी पालन के द्वारा अपनी आर्थिक आय बढ़ा रहा है लेकिन इस क्षेत्र में पशुधन उत्पादकता पश्चिमी क्षेत्र की अपेक्षा काफी कम है। क्योंकि यहाँ के पशुओं के लिए उच्च कोटि के हरे चारें की काफी कमी है। यहाँ के ज्यादातर पशु गेहूँ के भूसे, ज्वार/बाजरा की कड़वी एवं धान के पुआल आदि पर निर्भर हैं तथा कुछ क्षेत्रो में पशु चराई पर निर्भर हैं। इस वजह से प्रति पशु उत्पादकता काफी कम है। पूर्वांचल में पशुधन व्यवसाय अधिक प्रभावी नही हो सका है। इसका एक कारण और है, कि इस क्षेत्र में अच्छी नस्ल के पशुओं अभाव है। सरकार के द्वारा चलाये जा रहे प्रजनन संबंधी कार्यों का पशुपालक लाभ नहीं ले पा रहे है। जागरूकता की काफी कमी होने के कारण पशुधन की स्थिति अच्छी नहीं है। बढ़ती अबादी एवं सीमित कृषि क्षेत्र होने के कारण किसान चारा फसलों की अपेक्षा खाद्यान्न फसलों को अधिक महत्व देते है, जिससें हरे चारे का काफी अभाव रहता है। इस क्षेत्र में सुखे चारे की 16 प्रतिशत, हरे चारे का 64 प्रतिशत एवं खली दाना की 80 प्रतिशत कमी है। पूर्वांचल में चारा उत्पादन का समाधान चारा उत्पादन बढ़ाने के लिए नयी विधियां अपनानी पड़ेंगी जैसेः– फसलोंत्पादन के साथ मिश्रित हरा चारा उत्पादन को बढाना पड़ेगा।

फसलो के साथ चारा उत्पादन– फसलोत्पादन पद्धति में फसलों की दो लाइनो के बीच में हरा चारा उत्पादन कर सकते है, जिससे बची हुई जमीन का समुचित उपयोग चारा उत्पादन के लिये किया जा सकता है। इस तरह की पद्धति में जो सहायक फसल बोई जाती है, उसकी मुख्य फसल के साथ कोई प्रतिस्पर्धा नहीं होती है, बल्कि उन्ही संसाधनो से एक ही समय में उत्तम किस्म का मिश्रित पौष्टिक हरा चारा मिल जाता है, क्योंकि मिश्रित हरा चारा उत्पादन पद्धति में दलहनी फसलों को मिश्रित रूप से उगाया जाता है। जिससे कुल चारे के पैदवार में वृद्धि हो जाती है तथा साथ ही दलहनी हरे चारे की वजह से खाद के प्रयोग में भी बचत होती है। इसके अतिरिक्त इस पद्धति से भूमि का समुचित उपयोग खरपतवार नियंत्रण तथा प्रतिकूल परिस्थितियों में भी फसल उत्पादन सम्भव है। मिश्रित फसलोत्पादन पद्धति में उत्तम किस्म का हरा चारा प्राप्त होता है, क्योंकि दलहनी हरे चारे में प्रोटीन, कैल्सियम तथा फॉस्फोरस प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। अनेकों अनुसंधान के द्वारा पाया गया है कि एक दलीय फसलों को दलहनी चारा फसलों के साथ बोने से चारे की गुणवता में सुधार किया जा सकता है।

जायद (गरमी) के मौसम में मिश्रित हरा चारा उत्पादन– गर्मी के मौसम में जब पशुओं को दूग्ध उत्पादन बढ़ाने के लिए हरे चारे की आवश्यकता होती है तो ऐसे समय में बाजरा एवं ज्वार के साथ लोबिया एवं ग्वार को मिश्रित पद्धति से उगाकर पशुओं को उत्तम किस्म का पौष्टिक हरा चारा 250–300 कु0/हे0 प्राप्त किया जा सकता है, अगर इस पद्धति से बाजरा + लोबिया को बोया जाये तो 255 कु0/हे0 तक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। अगर बाजरा के साथ ग्वार की बुआई किया जाय तो इस पद्धति से 250 कु./हे. तक पौष्टिक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है इसी प्रकार अगर बाजरा के साथ ग्वाार की बुआई किया जाय तो इस पद्धति से भी 240 कु./हे. तक पौष्टिक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। ज्वार + लोबिया की बुआई किया जाय तो इस पद्धति से भी 320 कु./हे. तक हरा चारा उत्पादन किया जा सकता है। ज्वार + ग्वार के साथ भी 300 कु./हे. तक पौष्टिक हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है। जायद में

*वैज्ञानिक, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष कृषि विज्ञान केन्द्र, गाजीपुर

गन्ने की बुआई अगर लाइन से करते है तो इनके बीच काफी जगह रहती है इनके बीच उर्द/मूग के साथ लोबिया या मक्का/ज्वार के साथ लोबिया भी बो सकते है इससे भी उच्च कोटि का हरा चारा उत्पादन किया जा सकता है।

ओवर लैपिंग क्रापिंग सिस्टमः— इस पद्धति में उपयुक्त चारे की किस्मों को एक साथ उगाया जा सकता है जिससे वर्ष भर बड़े पशुपालको एंव सीमित संसाधन वाले छोटे किसानो को हरे चारे की आपूर्ति सुनिश्चित किया जा सके। इस पद्धति में बरसीम की बुआई अक्टुबर माह मे कर देते है इसके बाद 3—4 कटाई चारा लेने के बाद फरवरी मार्च के महीने में एक—एक मीटर की दूरी पर नेपीयर, नंन्दी घास एंव गिन्नी घास की रोपाई कर देते है। इन घासों को बरसीम के लिये दिये गये पोषक तत्वों एवं पानी के द्वारा आसानी से उगाया जा सकता है। बरसीम से अप्रैल तक हरा चारा मिलता है, इसके बाद बरसीम को हटा कर उसके स्थान पर लोबिया की बुआई कर देते है जिससे गर्मी में नेपियर के साथ लोबिया का भी उच्च कोटि का हरा चारा पशुओ को मिल सके इस पद्धति में लोबिया को अतिरिक्त, खाद पानी नही देना पड़ता है।

सघन चाराउत्पादन पद्धतिः— सघन चाराउत्पादन पद्धति में एक ही खेत में पूरे वर्ष हरा चारा उत्पादन किया जा सकता है लघु एंव सीमित संसाधन वाले छोटे किसानो को जिनके पास खेत कम हो उनके लिये यह चारा उत्पादन पद्धति अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योकि इससे कम एरिया मे कृषको को उत्तम किस्म का हरा चारा मिल जाता है कुछ महत्वपूर्ण सघन चाराउत्पादन पद्धति में गर्मियों में ज्वार/ बाजरा/ मक्का के साथ लोबिया /उर्द/मूंग आदि तथा सर्दियों में बरसीम + सरसो तथा बरसात में एम.पी. चरी + लोबिया + सोयाबीन आदि के साथ हरा चारा उत्पादन किया जा सकता है। सघन चाराउत्पादन पद्धति ऐसे क्षेत्रो मे अपनायी जाती है जहा सिचाई के साधनो का समुचित प्रबंध हों क्योकि चारा फसलो की सिचाई की अधिक आवश्यकता होती है। सघन चारा उत्पादन पद्धतियो के अर्न्तगत किये गये अनुसंधान कार्यो से परिणाम मिला कि बरसीम + सरसो + जई तथा नेपियर +लोबिया पद्धति की उपज 160 टन/हे. तक पौष्टिक हरा चारा प्राप्त हुआ। इसी प्रकारबरसीम + सरसो + जई तथा एम पी चरी + लोबिया पद्धति से 220 टन/हे. तक हरा चारा प्राप्त हुआ, बरसीम + सरसो + जई तथा मक्का + लोबिया — एम पी चरी से 275 टन/हे. तक हरा चारा पैदा हुआ।

बहुफसली पद्धतिः— बहुफसली पद्धति में 3—4 फसलों को एक वर्ष में एक ही भूमि में उगाया जाता है। इस फसलोत्पादन पद्धति का मुख्य उद्देश्य लघु एवं सिमान्त कृषको को कम क्षेत्रफल में उत्तम किस्म के पौष्टिक चारे का अधिकतम उत्पादन प्राप्त करना होता है। बहुफसली पद्धति फसल की कटाई एवं दूसरी फसल की बुआई के मध्य के समय में भी चारे की पूर्ति सुनिश्चित किया जा सकता है। बहुफसली पद्धतियाँ जैसे :—मक्का+लोबिया, एम पी चरी + लोबिया, ज्वार/बाजरा + लोबिया, इत्यादि को बहुफसली पद्धति के रुप में अपनाया जाता है।पूर्वांचल में सिंचित क्षेत्रो में दो फसली पद्धति गेहूँ — धान या गेहूँ — ज्वार/बाजरा/मक्का प्रचलित है। बरसात के पूर्व मध्य अप्रैल से जून (60.—70 दिन) गेहूँ काटने के बाद बरसात से पूर्व के समय में ज्वार/बाजरा/मक्का के साथ लोबिया उगाकर 300—350 कु0/हे0 हरा चारा प्राप्त किया जा सकता है।

लोबियाः— भारत वर्ष में लोबिया एक महत्वपूर्ण दलहनी हरा चारा है इसे ज्वार, बाजरा, मक्का के साथ अन्तः फसल के रुप में बोया जा सकता है। इसमें प्रोटीन की मात्रा 15—20 प्रतिशत तक पायी जाती हैं। दुग्ध उत्तपादन के लिये बहुत महत्वपूर्ण है।

प्रमुख प्रजातियाः— इसकी प्रमुख प्रजातियां बुन्देल लोबिया 1, बुन्देल लोबिया 2, रसियन जाइंट, आदि प्रमुख है।

भूमिः— लोबिया की फसल के लिये अच्छी जलनिकास वाली हल्की बलुई ढोमट अच्छी मानी जाती है।

बीजदर :— अकेले फसल के रुप में 40—50 कि. ग्रा.

(शेष पृष्ठ 14 पर)

करेला उत्पान की अद्यतन प्रौद्योगिकी

प्रमोद कुमार सिंह* एवं अंकिता गौतम**

करेला की खेती भारत वर्ष में खरीफ और जायद दोनों ऋतुओं में समान रूप से की जाती है। करेले के कच्चे फलों का रस मधुमेह (डाइबिटीज) के लिए भी बहुत उपयोगी है और उच्च रक्तचाप के मरीजों के लिए रामबाण है। इसमें उपस्थित कडुवाहट (मोमोर्डसीन) मनुष्य के खून को साफ करने में काफी मदद करता है।

उन्नतशील प्रजातियाँ

पूसा दो मौसमी– नाम के अनुसार यह किस्म दोनों मौसम (खरीफ व जायद) में बोयी जाती है। फल बुआई के लगभग 55 दिन बाद तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। फल हरे, मध्यम मोटे तथा 15 से0मी0 लम्बे होते हैं। प्रत्येक फल का वजन 120 ग्राम होता है। इस किस्म की औसत उपज 100 कु0/हे0 होती हैं।

पूसा विशेषः– इसके फल हरे, पतले, मध्यम आकार के तथा 20 सेमी0 लम्बे होते हैं। औसतन एक फल का वजन 115 ग्राम होता है। इसकी उपज 115–130 कु0/हे0 होती हैं।

अर्का हरित– इस प्रजाति के फल चमकीले हरे, आकर्षक, चिकने, अधिक गूदेदार तथा मोटे छिलके वाले होते हैं। फलों की पहली तुड़ाई बुवाई के 65 दिन बाद की जा सकती है। फल में बीज कम तथा कड़वापन भी कम होता है। फल की लम्बाई 15 सेमी0 तथा वजन 90 ग्राम होता है। इसकी उपज 130 कु0/हे0 होती हैं।

वी0के0 1(प्रिया)–इसके फल 40 सेन्टीमीटर तक लम्बे तथा मोटे छिलके वाले होते हैं। बुआई के 60 दिन बाद फल तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। प्रत्येक फल का वजन औसतन 120 ग्राम होता है। इसकी औसत उपज 140 कु0/हे0 होती हैं।

पंत करेला– 1 फल मोटे, 15 सेन्टीमीटर लम्बे, हरे तथा प्रारम्भ में पतले होते है। इसके फलों की पहली तुड़ाई बुवाई 55 दिनों बाद की जा सकती है। औसत उपज क्षमता 150 कु0/हे0 होती है। यह जाति पहाड़ों पर उगाने के लिए उपयुक्त हैं।

कल्याणपुर बाराहमासी– यह प्रजाति फल मक्खी के लिए प्रतिरोधी है तथा दोनों मौसमों में उगायी जा सकती हैं।

पूसा हाइब्रिड–1 फल हरे, मध्यम आकार के औसतन एक फल का वजन 100 ग्राम हो होता है। फूल बुवाई के 55–60 दिन बाद तुड़ाई योग्य हो जाते है। इसकी उपज 150–170 कुन्टल/हेक्टेयर होती है।

काशी हरितः–फल चमकीले हरे, चिकने, गूदेदार। एक फल का वजन 80–100 ग्राम होता है। पहली तुड़ाई 50 दिन बाद व मचाव पर खेती करने से लगभग 300 कु0/हेक्टेयर उपज मिल जाती है।

पूसा औषधिः– हल्के हरे, परचम लम्बाई वाले तथा औसत फल भार 85 ग्राम परिपक्वता अवधि 48–52 दिन, औसत उपज 198 कुन्टल/है0।

पूसा हाइब्रिड–1:– फल मध्यम लम्बाई का अधिक उपज पहली तुड़ाई 55–60 दिनों में औसत उपज 200 कुन्टल/है0।

पूसा हाइब्रिड–2 फल गहरा हरा मध्यम लम्बाई का, फल का औसत वजन 85–90 ग्राम पहली तुड़ाई 52 दिनों में औसत उपज 180 कुन्टल/है0

भूमि की तैयारी

करैला के लिए बलुई दोमट या दोमट भूमि जिसमें जल निकास का उत्तम प्रबन्ध हो उपयुक्त मानी जाती है। मृदा की पी0एच0 मान 6 से 7 अच्छा माना जाता है। खेत की 3–4 जुताई करके नाली या थाले बना लेते है जिसमें बीज की बुवाई करते है। बीज की बुवाई खेत में नमी की पर्याप्त मात्र रहने पर ही करनी चाहिए। जिसे बीजों का अंकुरण एवं वृद्धि अच्छी प्रकार हो सकें।

बीज की दर एवं बुआई

एक हेक्टेयर खेत की बुआई के लिए 5–6 किलोग्राम प्रति हेक्टर की आवश्यकता होती है अच्छी प्रकार से तैयार किये गये खेत में 2 से 2.5 मीटर की दूरी पर 40–50 सेन्टीमीटर चौड़ी नाली बनाकर नालियों के दोनो किनारों (मेड़ो) पर 45 से 60 सेन्टीमीटर की दूरी

*एस.एम.एस.(उद्यान) कृषि विज्ञान केन्द, महराजगंज, **शोध छात्रा, डा0 भीम राव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ।

पर बुआई करते है। एक स्थान पर दो से तीन बीज, 3–5 सेन्टीमीटर गहराई होनी चाहिए।

बुआई का समय–

इसकी बुआई ग्रीष्म ऋतु (जायद) में 15 फरवरी से 15 मार्च तक तथा वर्षा ऋतु (खरीफ) के लिए 15 जून से 15 जुलाई तक करते है। पहाड़ों पर बुबाई अप्रैल के महीने में की जाती है।

बुआई की दूरी

करेले की बुआई जहाँ तक हो सके मेड़ों पर करनी चाहिए। कतार से कतार की दूरी 1.5 से 2.5 मीटर और पौधे से पौध (थाले से थाले) की दूरी 45 से 60 से0मी0 रखनी चाहिए। अच्छी प्रकार से तैयार किये गये खेत में 2–5 मीटर की दूरी पर 50–60 से0मी0 चौड़ी नाली बनाकर नाली के दोनों किनारों पर बुआई करते हैं।

खाद एवं उर्वरक

सामान्य रूप से 20–25 टन सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद को खेत तैयार करते समय मिटटी में मिला देनी चाहिए। इसके बाद एक हेक्टेयर खेत के लिए 80 किलोग्राम नत्रजन, 60 किलोग्राम फास्फोरस, तथा 60 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से तत्व के रूप में देनी चाहिए। नत्रजल की एक तिहाई मात्रा, फास्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय दें। शेष नाइट्रोजन की दो बराबर भागों में बांट कर बुआई के लिए लगभग 20–30 दिनों बाद नालियों में ट्राप ड्रेसिंग करे और गुड़ाई करके मिट्टी चढ़ाये और दूसरी मात्रा पौधे की बढ़वार के समय (40–45 दिनों बाद) लगभग फूल निकलने से पहले टापड्रेसिंग के रुप में दें। एन0पी0के0 18:18:18 का पर्णीय छिड़काव करना लाभदायक है।

सिंचाई

खरीफ ऋतु में खेत की सिंचाई करने की आवश्यकता नहीं होती परन्तु वर्षा न होने पर सिंचाई की आवश्यकता 10–15 दिन के अन्तराल पर पड़ती है। अधिक वर्षा के समय पानी के निकास के लिए नालियों का गहरा व चौड़ा होना आवश्यक है। गर्मियों में अधिक तापमान होने के कारण 4–5 दिन पर सिंचाई करना चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण

वर्षा ऋतु या गर्मी में सिंचाई के बाद खेत में काफी खरपतवार उग आयें हो तो उनको खुरपी के सहारे से निकाल देना चाहिए। करेले में पौधे की वृद्धि एवं विकास के लिए 2–3 बार गुड़ाई करके मिट्टी चढ़ा देना चाहिए।

सहारा देना

करेले की लताओं को लकड़ी का सहारा देने से या मचान पर चढ़ा देने से फल जमीन के सम्पर्क से दूर रहते हैं। इससे फलों का आकार एवं रंग अच्छा रहता है तथा पैदावार भी बढ़ जाती है। मचान पर फल लगने से सड़ते नहीं है। इसके लिए प्रत्येक पौधे जब 30 सेमी0 लम्बे हो जाये तो नायलान या जूट की रस्सी के सहारे मचान तक चढ़ाया जाता है। सामान्यतः मचान की ऊंचाई 4.5 फीट तक रखते है।

फलों की तुड़ाई

जब फलों का रंग गहरे हरे से हल्का हरा पड़ना शुरू हो जाये तो फलों की तुड़ाई करने के लिए उत्तम माना जाता है। फलों की तुड़ाई एक निश्चित अन्तराल पर करते रहना चाहिए ताकि फल कड़े न हो अन्यथा उनकी बाजार में मांग कम होती है। बोने के 60–75 दिन बाद फल तोड़ने योग्य हो जाते हैं। फलों के तुड़ाई का कार्य हर तीसरे दिन करना चाहिए जिससे पौधे पर ज्यादा फल लगे।

प्रमुख रोग

चूर्णी फफूँद– रोंग का प्रथम लक्षण पत्तियों और तनों की सतह पर सफेद या धुँधले धुसर रंग के पाउडर जैसा दिखाई देता है। कुछ दिनों के बाद वे धब्बे चूर्णयुक्त हो जाते हैं। सफेद चूर्णी पदार्थ अंत में समूचे पौधे की सतह को ढक लेता है। अधिक प्रकोप के कारण पौधे का असमय ही निष्पत्रण हो जाता है। इसके कारण फलों का आकार छोटा रह जाता है ।

नियंत्रणः– इस रोग के नियत्रण के लिए टोपाज दवा का 0.024 प्रतिशत घोल यानि 1 मिली लीटर दवा 4 लीटर पानी में घोलकर एक बार छिड़काव करें। यदि यह दवा उपलब्ध न हो तो कैलेक्सीन 0.1 प्रतिशत का घोल बनाकर सात दिन के अन्तराल पर 2 बार छिड़काव करें।

मृदुरोमिल फफूँदी– यह रोग वर्षा एवं ग्रीष्म कालीन वाली दोनों फसल में समान रूप से आता है। उत्तरी भारत में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। इस रोग के मुख्य लक्षण पत्तियों पर कोणीय धब्बे जो शिराओं द्वारा सीमित होते हैं। ये कवक पत्ती के ऊपरी पृष्ठ पर पीले रंग के होते हैं तथा नीचे की तरफ रोयेदार वृद्धि करते हैं।

नियंत्रणः– बीजों को मेटलएक्सिल नामक कवकनाशी की 3 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए तथा मैकोजेव 0. 25 प्रतिशत घोल का छिड़काव रोग के लक्षण प्रारम्भ होने के तुरन्त बाद फसल पर करना चाहिए। फसल को मचान पर चढ़ाकर खेती करें।

श्याम वर्ण (एन्थेक्नोज):–इस रोग के लक्षण पत्तियों एवं फलो पर प्रकट होते है शुरु में पत्तियों पर पीले, गोल, जलयुक्त धब्बे दिखाई देते है। बाद में धब्बे आपस में मिलकर बड़े एवं भूरे हो जाते है।

नियन्त्रणः– बीज को थाईरम या बाविस्टीन (2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करके बोना चाहिए। मेन्कोजेब (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) का 7 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करना चाहिए।

फल विगलन रोगः–इस रोग से प्रभावित फलों पर कवक की अत्यधिक वृद्धि हो जाने से जमीन पर पड़े, फल सड़ने लगते हैं। जमीन पर पड़े फलों का छिलका नरम एवं गहरे रंग का हो जाता है। आद्र वायुमण्डल में इस सड़े हुए भाग पर रूई के समान घने कवकजाल विकसित हो जाते हैं। भण्डारण और परिवहन के समय भी फलों में यह रोग फैलता है।

नियन्त्रणः– यदि जमीन पर फैलाकर खेती करना है तो खेत में उचित जल निकास की समुचित व्यवस्था करें। फलों को भूमि के स्पर्श से बचाने हेतु मचान बनाकर खेती करना चाहिए। भण्डारण एवं परिवहन के समय फलों में चोट लगने से बचाऐं तथा हवादार एवं खुली जगह पर रखें।

मोजैक विषाणु रोग– यह रोग विशेषकर नई पत्तियों में चितकबरापन और सिकुडन के रूप में प्रकट होता है। पत्तियां छोटी एवं हरी पीली हो जाती है। संक्रमित पौधे की वृद्धि रूक जाती हैं। इसके आक्रमण से पर्ण छोटे और पुष्प छोटे–छोटे पत्तियों जैसे बदले हुए दिखाई पड़ते हैं। ग्रसित पौधा बौना रह जाता है और उसमें फलत बिल्कुल नहीं होता है।

नियंत्रणः– इस रोग की रोकथाम के लिए कोई प्रभावी उपाय नहीं है लेकिन निम्न उपायों के द्वारा इसको काफी कम किया जा सकता हैं।

- रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर जला देना चाहिए।
- रोग वाहक कीटों से बचाव करने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 1 मिली प्रति 3 लीटर पानी का घोल बनाकर दस दिन के अन्तराल में 2–3 बार फसल पर छिड़काव करें।

प्रमुख कीट

कद्दू का लाल कीट (रेड पम्पकिन बिटिल)– प्रौढ़ कीट विशेषकर मुलायम पत्तियां अधिक पसन्द करते हैं। अधिक आक्रमण होने से पौधे पत्ती रहित हो जाते हैं और मर जाते हैं। ग्रब (इल्ली) और पौधों की जड़ पर आक्रमण कर हानि पहुंचाती है जमीन में रहती है। इल्ली जमीन के सम्पर्क में आये फलों पर कभी–कभी आक्रमण कर उनमें छेद कर देती है। नये एवं छोटे पौधे आक्रमण के कारण मर जाते हैं।

नियन्त्रणः– इस कीट को नियन्त्रित करने के लिए मैलाथियान चूर्ण 5 प्रतिशत या कार्बारिल 5 प्रतिशत 25 किलोग्राम चूर्ण को राख में मिलाकर सुबह पौधों पर बुरकना चाहिए या मैलाथियान 50 ई0सी0 या कार्बरिल 50 डब्लू पी0का0 0.1 प्रतिशत घोल (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करना चाहिए।

फल–मक्खी–प्रौढ़ मादा छोटे, मुलायम फलों के छिलके के अन्दर अण्डा देना पसन्द करती हैं। अण्डे से मैगट निकलती है जो फलों के गूदे को खाकर सड़ा देती है। ग्रसित फल सड़ जाता है और नीचे गिर जाता है।

नियन्त्रणः– इस कीट के नियन्त्रण के लिये एक एकड़ फसल के लिए 80 से 100 स्थानों पर प्रलोभक (1 किग्रा केला, 10 ग्राम फयूराडान व 5 मि0ली0 सिरका लकड़ी की सहायता से मिलाकर) किसी छिछले बर्तन में रखें। प्रौढ़ आकर्षित होते हैं और प्रलोभक खाकर मर जाते हैं। जिससे प्रौढ़ मादा मक्खी द्वारा फल पर अण्डा देना कम हो जाता है। मैलाथियान 50 ई0सी0 का 2 मिली एवं 50 ग्राम गुड़ प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

कृषक आय संवर्धन में नैनो उर्वरकों की भूमिका

नंदन सिंह* एवं शैलेन्द्र सिंह**

यद्यपि रासायनिक उर्वरक फसल उत्पादकता में वृद्धि करते हैं, परंतु वे मृदा की खनिज पदार्थ में असंतुलन पैदा करते हैं एवं मृदा की उर्वरता को प्रभावित करते हैं। रासायनिक उर्वरकों का उपयोग बड़े पैमाने से मृदा संरचना एवं मृदा सूक्ष्म जीव नस्पतियों को अपूरणीय क्षति भी हो रही है। यह उपभोगकर्ताओ की भावी पीढ़ियों में उत्परिवर्तनीय परिवर्तन के लिए जिम्मेदार पारिस्थिति की प्रणालियों में खाद्य श्रृंखला में हस्तछेप कर प्रभावित करते हैं। तेजी से बढ़ती विश्व जनसंख्या ने कृषि क्षेत्र मांग में वृद्धि की है, जिससे शोधकर्ताओं ने किसानों को रासायनिक उर्वरकों के अत्याधिक उपयोग से सावधान किया है। इस समस्या के निवारण हेतु नैनो उर्वरक एक आशा जनक विकल्प के रूप में उभरा है जो कि उच्च फसल उत्पादन के साथ मृदा की सेहत सुधार भी सुनिश्चित करता है। नैनो उर्वरकों का उपयोग पारंपरिक उर्वरकों से बेहतर क्यों है? नैनो कणों के अद्वितीय गुण, जैसे उच्च सोखने की क्षमता, बढ़ी हुई सतह से आयतन अनुपात एवं नियंत्रित विमोचन लक्षित लक्ष्य जो उन्हें पौधों की संभावित वृद्धि को बढ़ाने वाला बनाते हैं। इन चारित्रिक विशेषताओं के कारण, पौधों में पोषक तत्वों की एक स्मार्ट वितरण प्रणाली के रूप में नैनो संरचित उर्वरकों को उपयोग किया जा सकता है। पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में नैनो उर्वरक बहुत धीरे–धीरे मुक्त होतेहैं। यही दृष्टि कोण पोषण प्रबंधन में सुधार करताहै, अर्थात, पोषक तत्वों की दक्षता को बढ़ाता है और भू जल में हो रहे पोषक तत्वों के नुकसान को भी घटाता है। नैनो उर्वरकों को विशेष रू‍प से जैविक आपूर्ति और बढ़ते पर्यावरण दबाव केअनुक्रिया में सक्रिय तत्व उन्मुक्त करने के लिए बनाया गया है। वैज्ञानिकों का मानना है कि नैनो उर्वरक प्रकाशसंश्लेषक गति विधि दर, बीजअंकुरण, नाइट्रोजनउपापचय, कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन संश्लेषण की दर में वृद्धि कर कृषि उत्पादकता बढ़ाने में सहायक होते है।प्रभावी नैनो सूत्रीकरण का निर्माण प्रभावी नैनो सूत्रीकरण का निर्माण अमोनियमह्यूमेट, अमोनिया, यूरिया, पीट, पौधों के अपशिष्ट, और अन्य कृत्रिम उर्वरक से बनाया जाता है।। नैनो सूत्री करण का एक उदाहरण है नैनो आकार युक्त नाइट्रोजन उर्वरक जो कैल्शियम सायनमाइडपर यूरिया के जमाव के परिणाम स्वरूप तैयार होता है। धान की उत्पादकता बढ़ाने में नैनो नाइट्रो जन उर्वरक महत्व पूर्ण हैं। यह रासायनिक उर्वरकों के लिए एक उत्कृष्ट विकल्प के रूप में माना जाता है क्योंकि यह पौधें के वृद्धि को बढ़ावा देता है और पर्यावरण प्रदूषण को कम करता है। पारंपरिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से रासायनिक उर्वरकों के निछालन, विनाइट्रीकरण और वाष्पीकरण द्वारा पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा मिलता है। यूरिया को पीसकर और विभिन्न जैव उर्वरक के साथ मिलाकर एक प्रभावी नैनो उर्वरक के रूप में तैयार किया जाता है जो कि पौधों को लंबी अवधि के लिए पोषक तत्वों को धीमी गति से क्रमिक मुक्ति प्रदान करता है। नैनो उर्वरकों को यांत्रिक और जैव रासायनिक प्रक्रियाओं को भिन्न या दोनों को एक साथ उपयोग करके विकसित किया जाता है। यांत्रिक साधनों के माध्यम से नैनो आकार के कणों को प्राप्त करने के लिए सामग्री को पीसकर बनाया जाता है और जैव रासायनिक तकनीकों को प्रभावी नैनो पैमाने के योगों को प्राप्त करने के लिए नियोजित किया जाता है। उर्वरकों को अक्सर नैनो कणों के भीतर आवृत किया जाता है। इस तरह के नैनो उर्वरक पौधे को अधिक अवशोषण क्षमता और पोषक तत्व की दक्षता प्रदान करते हैं। नैनो सामग्री के साथ पोषक तत्वों के आवृतिकरण की प्रक्रिया को तीन तरीकों से किया जा सकता है। ये नीचे बताए गए हैं–

1. पोषक तत्व नैनो सामग्री (बहुलक फिल्म) की एक पतली परत के साथ ले पित होते है।
2. नैनो सामग्रियों के भीतर आवृत पोषक तत्त्व विभिन्न प्रकृति एवं रासायनिक संरचना वाले

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (मृदा विज्ञान), **विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्; विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, बहराठच, आ.न.दे. कृ. वि. वि, अयोध्या, उ.प्र.

होते है।

3. पोषक तत्वों को सूक्ष्म रासायनिक पायस के रूप में दिया जाता है।

पौधों पर नैनो उर्वरको का प्रयोग

शोधकर्ताओं ने कहना है कि पौधों की जड़ प्रणाली, जो पोषक तत्वों के लिए प्रवेश द्वार है, पारंपरिक उर्वरकों की तुलना में नैनो उर्वरकों के लिए अत्यधिक छिद्र पूर्ण है।वैज्ञानिकों ने नैनो कणों को पादप प्रणाली में घुसने एवं दक्षता निर्धारित करने के लिए, बांकलाबीन (विसियाफाबा) पे प्रयोग किए और उन्होंने पाया कि ये नैनो कण जो कि 1.0 एनएम आकार से भी बड़े नैनो कणों की तुलना में बड़ी संख्या में पत्तियों में प्रवेश कर सकते हैं। नैनो उर्वरकों को जीव द्रव्यतंतु के माध्यम से भी पोषक तत्वों को पहुंचाने की भी जानकारी मिली है। जीव द्रव्यतंतु कोशिकाओं जो कि आयनों को ले जाने के लिए उपयोग किए जाने वाले लगभग 50–60 एनएम आकार के नैनो आकार वाली नाली हैं। कार्बन नैनो ट्यूब और सिलिका नैनो पार्टिकल्स पौधों के लक्ष्य स्थल पर पोषक तत्व और अन्य महत्वपूर्ण जैव रासायनिक तत्त्व के परिवहन और वितरण के लिए उपयोगी उपकरण हैं।

सतत फसल विकास में नैनो उर्वरको का उपयोग

वैज्ञानिकों का मानना है कि मजबूत पादप विकास (अंकुरण एवं जड़ प्रणाली) के लिए जिंक नैनो उर्वरक लाभदायक हैं और साथ ही पत्तियों की पर्ण हरित कि मात्रा में भी वृद्धि करते हैं। विभिन्न अध्ययनों में पाया गया कि जस्ता नैनो उर्वरकों के संशोधन से मूंगफली की पैदावार में काफी वृद्धि हुई और ये नैनो उर्वरक सब्जियों के बीज उत्पादन में भी सुधार करते हैं। इसी तरह, कार्बन नैनो ट्यूब वाले उर्वरक जो कि अंकुरण में लगने वाले दिनों को कम करने में सहायक है तथा य नैनो उर्वरक धान के रोपाई में जड़ो के विकास को बढ़ावा देते हैं। नैनो उर्वरक फसल चक्र की अवधि को कम करते हैं और साथ ही फसल की उपज को बढ़ाते हैं। जैसे–संशोधितएन.पी.के (नाइट्रोजन, फास्फोरस, औरपोटेशियम) नैनो कणों के उपयोग से गेहूं में फसल चक्र को 40 दिनों तक कम कर दिया और अनाज की पैदावार में वृद्धि पायी गई।

नैनो उर्वरक की कमियां

स्थायी फसल उत्पादन में सहायता के बावजूद, विपणन से पहले नैनो उर्वरकों की सीमाओं पर सावधानी पूर्वक विचार किया जाना चाहिए। नैनो उर्वरक का उपयोग करने की सीमाएं मुख्य रूप से कठोर निगरानी और अनुसंधान अंतराल की अनुपस्थिति के कारण उत्पन्न होती हैं। नैनो उर्वरक के उपयोग से जुड़ी कुछ कमियां स्थायी फसल उत्पादन के लिए नीचे सूची बद्ध हैं।

1. नैनो उर्वरकों की उच्च लागत।
2. नैनो उर्वरक जोखिम प्रबंधन प्रणाली का अभाव।
3. निर्माण प्रक्रिया में मानकी करण का अभाव। यह नैनो कणों के तहत एक ही नैनों समग्री के विभिन्न परिणामों के बारे में बताता है।
4. आवश्यक मात्रा में उत्पादन और नैनो उर्वरकों की उपलब्धता में कमी जो कि नैनो उर्वरकों के व्यापक पैमाने पर पौधों के पोषक तत्वों के स्रोत के रूप में अपनाने को सीमित करता है।

(पृष्ठ 09 का शेष)

/हे. की दर से बोना चाहिये यदि अन्तः फसल के रुप में बोना हो तो उस स्थिति में बीज की मात्रा 15–20 कि. ग्रा./हे.रखनी चाहिये। बीज सदैव कवकनाशी रसायनो वेविस्टीन तथा डायथेन जेड 78 से उपचारित कर के बोना चाहिये।

खाद एंव उर्वरक :– 20–25 टन सडी गोबर की खाद खेत तैयारी के 15 दिन पूर्व मिट्टी में मिलाना चाहिये। उर्वरको में 25 कि.ग्रा./हे. नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है एंव साथ मे 60 कि.ग्रा./हे. फॉस्फोरस तथा 50 कि.ग्रा./हे. पोटास की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा खेत तैयारी के समय एंव शेष मात्रा बुआई के 21 दिन बाद प्रथम सिचाई के बाद खेत में छिड़ककर सिचाई करनी चाहिये। जिससे चारा जल्दी तैयार होता है।

कटाई:– समान्यतः चारे के लिये फसल बुआई के 60–90 दिन बाद कटाई कर सकते हैं।

उपज:– उन्नतशील प्रजातियों से 250–300 कु./हे. तक हरे चारे की उपज प्राप्त हो जाती है।

जलजीव पालन में नवीनतम तकनीकी प्रगति

शशांक सिंह* एवं ए पी राव**

भारत में मत्स्य पालन एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है, जो लाखों लोगों को रोजगार प्रदान करता है और देश की खाद्य सुरक्षा में योगदान देता है। भारत की अर्थव्यवस्था में मात्स्यिकी क्षेत्र का योगदान 1.24 प्रतिशत और भारत के कृषि क्षेत्र में मात्स्यिकी क्षेत्र का योगदान 7.28 प्रतिशत है। मत्स्य पालन में लोगों की बढ़ती रूचि एक सुखद संकेत है और आर्थिक दृष्टिकोण से अत्यंत लाभकारी है। देश तथा राज्यों में बढ़ती जनसँख्या तथा घटता जल स्तर चिंता का विषय है, जिसने कृषि के साथ – साथ मात्स्यिकी के क्षेत्र में भी अपार संभावनाओं को तलाशने का अवसर प्रदान किया है। इसके दृष्टिगत मत्स्य पालन में कई नवीनतम तकनीकियों का विकास हुआ परन्तु मत्स्य पालन हेतु नवीनतम तकनीकी विकास के रूप में बायोफ्लॉक तथा री सर्कुलेटरी एक्वाकल्चर सिस्टम को अत्यधिक लोकप्रियता मिली है, जिसका प्रमुख कारण सरकार द्वारा दी जाने वाली आर्थिक सहायता है।

बायोफ्लॉक मत्स्य पालन पद्धति

बायोफ्लॉक तकनीक एक कम लागत में अधिक मुनाफा देने का उन्नत तरीका है, इस प्रकार के मत्स्य पालन को शून्य जल विनिमय प्रणाली भी कहते हैं जिसमें जल की अत्यधिक बचत होती है। इस तकनीकी में मछलियों के अपशिष्ट पदार्थ (जैसे अमोनिया, नाइट्रेट आदि) को उनके परिवेश में ही लाभकारी पोषणयुक्त आहार में परिवर्तित कर दिया जाता है जो मछलियों के लिए पोषण का काम करता है। इस प्रकार के आहार लाभकारी जीवाणु, शैवाल, प्रोटोजोन आदि का मिश्रण होते हैं जिसमें प्रोटीन की 25 से 50 प्रतिशत और वसा की 5 से 15 प्रतिशत मात्रा पाई जाती है।

अपशिष्ट पदार्थों को परिवर्तित कर तैयार किये गये फ्लॉक मत्स्य पालन के दौरान आने वाले आहार के व्यय को भी लगभग 33 प्रतिशत कम कर देते हैं। इस पद्धति में कार्बन और नाइट्रोजन का एक निश्चित अनुपात (10:1- 15:1) बनाने के लिए अमोनिया के विश्लेशण के बाद कार्बन को मिलाया जाता है और तीव्र गति से ऑक्सीजन का प्रवाह किया जाता है। कार्बन स्रोत के रूप में गेहूं का आटा, गुड़, मोलेसिस, टैपिओका फ्लोर आदि का प्रयोग किया जा सकता है। इस पद्धति में बिजली की व्यवस्था २४ घंटे होनी चाहिये अन्यथा फ्लॉक के टैंक की तली में बैठ जाने से वातावरण प्रदूषित हो जायेगा और नुकसान होने की संभावना रहती है। इस तकनीकी में जल के प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना चाहिये तथा घुलित ऑक्सीजन, पी एच एवं अमोनिया की जांच करते रहना चाहिये। जल की गुणवत्ता की जांच करते रहने से अप्रत्याशित हानि से बचा जा सकता है। इस प्रकार के सघन मत्स्य पालन में मछलियों की प्रजाति का चयन भी अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है तथा प्रायः वायु स्वांसी मछलियां जैसे सिंघी, मांगुर, मुरेल तथा कवई का चयन किया जाता है। पालन हेतु पंगास, कालबासु तथा रोहू मछली का चयन भी किया जा सकता है।

बायोफ्लॉक उच्च घनत्व और जैव सुरक्षा का समर्थन करता है, जल विनिमय की अनुपस्थिति में भी पानी की गुणवत्ता बनाए रखता है, और आहार के रूप में नाइट्रोजन इनपुट का अधिकतम उपयोग करता है। इजराइल के प्रो. योरम ने इस तकनीक के संशोधन और प्रचार के लिए अत्यधिक योगदान दिया। इजराइल में विकसित तकनीक बाद में इसके कई फायदों के कारण कई अन्य देशों में फैल गई।

पुनर्चक्रण जलीय कृषि पद्धति (आरएएस)

पुनर्चक्रण जलीय कृषि पद्धति (आरएएस) टैंक–आधारित पालन पद्धति हैं जिनमें मछली को नियंत्रित पर्यावरण के तहत उच्च घनत्व पर पालन किया जा सकता है। आरएएस में, पानी एक उपचार प्रक्रिया के माध्यम से एक मछली टैंक से बहता है और फिर टैंक में वापस आ जाता है। इस पद्धति का उपयोग न्यूनतम भूमि क्षेत्र और पानी का उपयोग करते

(शेष पृष्ठ 19 पर)

*सहायक प्राध्यापक (जलजीव पालन), मात्स्यिकी महाविद्यालय, **निदेशक प्रसार, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

संतुलित आहार में श्री अन्न फसलों की उपयोगिता

हनुमान प्रसाद पाण्डेय* एवं रितेश सिंह गंगवार**

न्यूट्रीसीरियल का भारतीय कृषि में महत्वः वर्तमान परिस्थितियों में न्यूट्रीसीरियल ही कृषि का भविष्य है, क्योंकि जिस प्रकार ये जलवायु परिवर्तन को सहन कर सकते है, उतना अन्य फसलें नहीं कर सकतीं। ये विभिन्न तापमान व नमी को भी सहन कर लेते हैं तथा इनको उगाने में कम साधनों का प्रयोग होता है। ये सूखे की स्थिति को आसानी से सहन कर लेते है, इनका जीवनकाल कम होता है अतः ये सतत् खेती में भी प्रयोग होते हैं। इनसे जैव ईधन भी प्राप्त होता है, जिसका प्रयोग पेट्रोल के विकल्प के रूप में किया जा सकता है। इन फसलों में कीटों और रोगों का प्रकोप मुख्य खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा कम होता है और इनको लम्बे समय तक भडारित किया जा सकता है।

जब से कोविड–19 का प्रकोप हुआ है, तबसे प्रत्येक शहरी व्यक्ति गांव की तरफ अग्रसर हुआ है और इम्युनिटी फूड की मांग बहुत तेजी से बढ़ी है। इन अनाजों से बनाये जाने वाले अनेक प्रसंस्करित खाद्य प्रसंस्करित खाद्य उत्पाद जैसे–बिस्किट, नमकीन लस्सी, हलवा, पापड़ आदि पौष्टिक होने के साथ–साथ ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार भी उत्पन्न करवा सकते है। इन न्यूट्रीसीरियल के महत्व और उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए भारत ने वर्ष 2018 में संयुक्त प्रास्ताव रखा था, जिसे 72 अन्य देशों ने भी समर्थन दिया। अतंत इसे स्वीकार कर लिया गया और परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र महासभा ने वर्ष 2023 को अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष मनाने की घोषणा की है। इसका मुख्य उद्देश्य लोगों को इन न्यूट्रीसीरियल के प्रति जागरूक करना है, जिससे इनके उत्पादन और गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी हो।

मानव स्वास्थ्य में न्यूट्रीसीरियल की उपयोगिता

पौष्टिक अनाजों की घोषणा विशेषताओं को अन्य अनाजों की तुलना में लम्बे समय से जाना जाता है। न्यूट्रीसीरियल की प्रोटीन, संतुलित अमीनो अम्लों की बनी होती है। इनमें गैर स्टार्च और आहार फाइबर पाया जाता है। ये रक्त में कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम रखते हैं तथा रक्त में शर्करा की मात्रा को भी नियंत्रित करते है। इनका ग्लिसेमिक इंडेक्स कम होता है, जिससे ये मधुमेह रोग के नियंत्रण में सहायक होते हैं। पौष्टिक अनाजों में महत्वपूर्ण विटमिन हृदय रोग अल्सर और हाइपरग्लाइसीमिआ जैसे रोगों के होने के खतरा भी कम होता है। रागी में कैल्शीयम अधिक होता है, जिससे हड्डियां और दांत मजबूत होते हैं। इसके साथ–साथ इसमें ग्लूटिन भी अनुपस्थित होता है। अतः यह उनके लिए भी उपयुक्त है, जिनको उदर संबंधी रोग भी कम होते हैं। यह गर्भवती महिलाओं के लिए भी अत्यंत लाभदायक होता है। ज्वार, जो विश्व का 5वां मुख्य अनाज है, का प्रयोग अनेक खाद्य पदार्थ जैसे–डबलरोटी, बेबीफूड इत्यादि बनाने में होता है। कोदों में खाद्य रेशे प्रचुर पाए जाते हैं। इसमें पाया जाने वाला पोलिकॉनॉल्स एवं ट्रिप्टोपफेन वजन घटाने के साथ–साथ पाचन तंत्र संबंधी रोगों के निदान में सहायक होता है।

भारत में छोटे दाने वाले पौष्टिक अनाज जैसे रागी, सांवा चीना कुकुम कोदो और कुटकी आदि की खेती प्रमुख रूप से आध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र एवं ओडिशा आदि राज्यों में की जाती है। उत्तर प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र के कुछ जिलों जैसे–हमीरपुर, ललितपुर इत्यादि में भी अन्य पौष्टिक अनाज जैसे–सांवा भडुआ कोदों अदि उगाये जा रहे हैं। इन फसलों को कम उगाये जाने के पीछे कई कारक हैं, जिनमें मुख्यतः परिवार में होने वाली अन्य फसलें, जिनकी उपज व कीमत अधिक होना तथा बाजार की उपलब्धता आदि शमिल हैं। दानों के आकार के अनुसार पौष्टिक अनाजों को मूलतः दो भागों में वर्गीकृत किया गया है। प्रथम वर्गीकरण में, मुख्य पौष्टिक अनाज जिसमें बाजरा और ज्वार आते हैं। दूसरे वर्गीकरण में छोटे दाने वाले पौष्टिक अनाज जैसे–रागी, सांवा, चीना, कुकुम कोदो और कुटकी सम्मिलित हैं।

इन छोटे दाने वाले पौष्टिक अनाजों को ही साधारणतः

*विषय वस्तु मृदा विज्ञान, **विषय वस्तु विशषज्ञ, सस्य विज्ञान, कृषि विज्ञान केन्द्र चन्दौली,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्व विद्यालय कुमारगंज अयोध्या– 224229

न्यूट्रीसीरियल फसलों का संक्षिप्त विवरण–

क्र सं	पौष्टिक अनाज फसल वानस्पतिक नाम	मृदा एवं जलवायु	उन्नत प्रजातिया	बुआई का समय एवं बीज दर	पोषक तत्त प्रबंधन	खरपतवार प्रबंधन	सिचाई एवं जन प्रबंधन	फसल अवधि	उपज
1	मडुआ या रागी / फिगर मिलेट इलुसिन कोराकाना	गर्म एवं नम जलवायु तापमान 26–29 डिग्री सेल्सियस, वर्ष–50–90 सेमी अच्छी जल निकास वाली हल्की दोमट मृदा पी–एच 7–8.5	वी एल 101,वी एल 204, वी एल 124, वी एल, 146 इन्दापक 1. इन्दापक 5, निर्मल ई सी 4840 जो एन आर 852, एच आर 374,पी आर 202. पी ई एस 8, पी ई एस. 176 आई ई 28 आई ई 109, पद्मावती बिरसा मुडा 2, जी आर यू 78 वी आर 708	जून जुला ई, सीधी बुआई 8 से 10 कि ग्रा / हैक्टर, रोपण विधि–4 किग्रा–हैक्टर पौध अंतरण 25X10 से मी	10 टन गोबर की खाद 60, 40 30 कि ग्रा नाइट्रोजन फॉस्फोरस पोटाश प्रति हैक्टर	दो निराई–गुड़ाई 20–25 दिन व 40–45 दिन पर अथवा मेटाक्सयूरॉन 0.75 किग्रा सक्रिय तत्व अंकुरण पूर्व अथवा 2.4 डी 0.75 किग्रा सक्रिय तत्व बुआई के 20–25 दिन बाद	दो सिंचाईकल्ले निकलते समय तथा बाली निकलते समय	80–100 दिन	15 से 20 क्विंटल / हैक्टर
2	कगनी या काकुन / फॉक्सटेल मिलेट काग्नी सेटारिया इटालिका	उपोषण जलवायु तापमान 25–35 डिग्री सेल्सियस वर्षा–50–60 सेमी हल्की दोमट से भारी मृदा पी एच 7–8.5	आर्जुन को 3, को 4 एच 1, जी 1, आई एस सी 201 एस आई ए 326 एस आई, ए, 2593	खरीफ जून जुला ई जायदः फरवरी– मार्च 8 से 10 किग्रा / हैक्टर पौध अंतरण 30X10 से मी	गोबर की खाद 60, 30, 30 कि ग्रा नाइट्रोजन फॉस्फोरस पोटाश प्रति हैक्टर	एक निराई–गुडाई 20–25 दिन पर अथवा पेंकिमेथालिन 0.75 किग्रा सक्रिय तत्व अंकुरण पूर्व अथवा 2.4 डी 0.75 किग्रा सक्रिय तत्व बुआई के 20–25 दिन बाद	खरीफ की फसल को सामन्यतः सिंचाई की आवश्यक ता नहीं होती, जायद की फसल में 10–12 दिन के अंतर पर सिंचाई करनी चाहिए	60 से 90 दिन	वर्षाधीनः 8 से 10 क्विंटल / हैक्टर सिंचितः 12 से 15 क्वंटल / हैक्टर

3	सांवां/ बर्नयार्ड मिलेट इकाईनोक्लोअ 1 प्रुफमेटेसिया	गर्म एवं नम जलवायु वर्षा–50–90 सें,मी अच्छी जलधारण क्षमता वाली हल्की दोमट से लेकर भारी मृदा पी–एच 65–8.0	के, 1 टा 25, टा 46, वी एल 1, वी एल मादिरा 8, आई पी 149 यू पी.टी. 8, आई पी. एम. 148 आई.पी. एम. 151 वी.एल. 8, को 11	जून जुला ई 8 से 10 किग्रा/हैक्टर पौध अंतरण 25X10 से. मी.	7–8 टन गोबर की खाद, 50, कि.ग्रा नाइट्रोजन फॉस्फोरस पोटाश प्रति हैक्टर	उपरोक्तानुसार	सामान्यतः सिंचाई की आवश्यक ता नहीं होती, जायद की फसल में 10–12 दिन के अंतर पर सिंचाई करनी चाहिए	60 से 90 दिन	वर्षाधीनः 8 से 10 क्विंटल/हैक्टर सिंचितः 12 से 15 दिन क्विंटल/ हैक्टर
4	कोदो–कोदो मिलेट पेस्पैलम स्कोर्बिकुलेटम	उष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु वर्षा–50–75 से.मी. अच्छी जल निकास वाली हल्की दोमट मृदा पी–एच 7–8.5, खेत में जल जमाव न हो	निवास नं 1 डिंडोरी 73 पाली पी एस सी.1, पी. एस. सी. 2, जी.पी. ओ एस. 41 आर.पी एस, 123 आर पी एस. 158 केहरपुर, हरका 1	जून जुलाई 15 से 20 किग्रा/हैक्टर, पौध अंतरण 25X10 से मी	7–8 टन गोबर की खाद, 50, 30,30 किग्रा नाइट्रोजन फास्फोरस पोटाश प्रति हैक्टर	उपरोक्तानुसार	उपरोक्ता नुसार	90–110 दिन	10 से 15 क्विंटल/ हैक्टर
5	चेना/कॉमन मिलेट या प्रोसो मिलेट पैनिकम मिलियासियम	शुष्क एवं गर्म जलवायु वर्षा–50–75 से.मी. हल्की दोमट से लेकर बलुइ मृदा	को. 1 एम.एस. 4872, एम.एस. 4884 पी. वी. 196, पी.वी. 1685 बी आर.7	जून जुलाई 8 से 10 किग्रा/हैक्टर, पौध अंतरण 25X10 से मी	5–6 टन गोबर की खाद 50, 30, 20 किग्रा नाइट्रोजन फास्फोरस पोटाश प्रति हैक्टर	उपरोक्तानुसार	उपरोक्ता नुसार	65–70 दिन	10 से 12 क्विंटल/ हैक्टर
6	कुटकी/लिटिल मिलेट पैनिकम सुमात्रेंस	उपोषण जववायु लगभग सभी प्रकार की मुदाओं में इसकी खेती की जा सकती है, दोमट मृदा सर्वोत्तम	बारसा गांधी 1, पैयुर 1, टी.एन.ए.यू 63 एच. 1 एच. 2, पी. एस. 1	जून जुलाई 8 से 10 किग्रा/हैक्टर, पौध अंतरण 25X10 से मी	2–3 टन गोबर की खाद 40, 20, 20 किग्रा नाइट्रोजन फास्फोरस पोटाश प्रति हैक्टर	उपरोक्तानुसार	उपरोक्ता नुसार	80–90 दिन	8 से 10 क्विंटल/ हैक्टर

अनाज कहा जाता है। पौष्टिक अनाज अनेक पोषक तत्वों का स्रोत होते हैं। अतः इन्हे न्यूट्रीसीरियल भी कहा जाता है। वर्तमान में अंधाधुंध रसायानों के प्रयोग एवं कुपोषण के कारण आम जनता ने इन न्यूट्रीसीरियल पर दोबारा ध्यान देना शुरू कर दिया है। इन न्यूट्रीसीरियल को उगाने में कम पानी एवं रासायनिक खाद का प्रयोग होता है, अतः ये पर्यावरण के लिए भी उपयुक्त होते हैं। बुदेलखंड जैसा क्षेत्रों जहां पर कम वर्षा, भुमि की असमानता अधिक तापमान इत्यादि समस्याएं हैं, में भी इन न्यूट्रीसीरियल को

सुगमता से उगाया जा सकता है। ये पशुओं को होने वाली चारे की कमी को भी पूरा कर सकते हैं। ये मनुष्य के साथ–साथ पशुओं को भी पोषण से युक्त आहार उपलब्ध करवा सकते हैं। हरित क्रांती आने से पूर्व तक देश की अधिकांश आबादी भोजन के लिए इन्ही न्यूट्रीसीरियल पर निर्भर थी और भारत पूर्ण रूप से खाद्यान्न आयात पर निर्भर था। हरित क्रांति के बाद फसलों की विविधता में भी कमी आयी फलस्वरूप इन न्यूट्रीसीरियल का क्षेत्रफल घटता ही चला गया। एवं 1967–68 में इन न्यूट्रीसीरियल का उत्पादन 19.03 मिलियन टन था जो वर्ष 2017–18 में घटकर 13.71 मिलियन टन रह गया। सरकार ने इन अनाजों के पोषक गुणों और बढ़ती हुई आबादी को पोषणयुक्त भोजन उपलब्ध करवाने को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2018 को पौष्टिक अनाज वर्ष के रूप में घोषित किया था। इसी प्रकार की अनेक योजनाओं और कोशिशों के फलस्वरूप पुन इन न्यूट्रीसीरियल के क्षेत्रफल और बढ़ोत्तरी हुई, जो 2020–21 में क्रमशः 23.83 मिलियन हैक्टर और 51.15 मिलियन टन हो गया है।

न्यूट्रीसीरियल पूरे विश्व के शुष्क और अशुष्क क्षेत्रों में मुख्य खाद्य स्रोत है।

न्यूट्रीसीरियल में स्टार्च प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जबकि प्रोटीन, कैल्शीयम, आयरन, विटामिन और खाद्य रेशों की मात्रा में चावल और गेहूं से 3–5 गुना बेहतर होता है। ये न्यूट्रीसीरियल सभी व्यक्तियों, खासकर बच्चों और गर्भवती महिलाओं के लिए बेहद लाभदायक होते हैं। न्यूट्रीसीरियल के महत्व को ध्यान में रखते हुए सरकार द्वारा पोषण योजना चलायी गयी और पोषण एटलस तैयार किया गया। इसमें प्रत्येक राज्य की खाद्य संबंधी जानकारियां निहित क गयीं। भारतीय खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण एफएसएसएआई ने भी ईट राइट इंडिया अभियान लागू किया जिसमें इन न्यूट्रीसीरियल का विशेष ध्यान रखा गया है।

(पृष्ठ 15 का शेष)

हुए मछली की विभिन्न प्रजातियों की उच्च घनत्व वाली खेती के लिए किया जाता है इस पद्धति में मछलियों को नियंत्रित वातावरण में पाला जाता है इस पद्धति में यांत्रिक और जैविक फिल्टर के प्रयोग से पानी की सफाई करते हुए पुनर्चक्रित करके उसी पानी को मत्स्य पालन हेतु प्रयोग किया जाता है। इस पद्धति में कुल पानी की मात्रा का १० प्रतिशत से अधिक जल को बदलने की आवश्यकता नहीं होती है। मत्स्य पालक इस पद्धति में अधिक सघन पालन करते हुए आहार की गुणवत्ता और फिल्ट्रेशन के प्रकार से अधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं। आर ए एस पद्धति में कई फिल्टर डिजाइन का प्रयोग किया जाता है परन्तु सभी फिल्ट्रेशन का समग्र लक्ष्य पानी से चयापचय अपशिष्ट अतिरिक्त पोषक तत्वों और ठोस पदार्थों को निकालना और मत्स्यपालन के लिए अच्छे पानी की गुणवत्ता प्रदान करना होता है। ठोस पदार्थों को हटाने से बैक्टीरिया की वृद्धि, ऑक्सीजन की मांग और रोग का प्रसार कम हो जाता है। सैंड फिल्टर, बायोफिलटर तथा प्रोटीन फ्रॅक्शनटर का प्रयोग इस पद्धति में किया जा सकता है, सेटलिंग टैंक का निर्माण करने से सैंड फिल्टर के प्रयोग से बचा जा सकता है।

इस पद्धति में तालाब या रेसवे की तुलना में कम पानी की आवश्यकता होती है। सघन संचयन पद्धति के कारण कम भूमि की आवश्यकता होती है और उत्पादकता अधिक होती है। इस पद्धति में जैव सुरक्षा में वृद्धि और बीमारी के इलाज में आसानी होती है। मछलियों के पर्यावरण की बारीकी से निगरानी की जा सकती है।

इस पद्धति के सामग्री और अवसंरचना में उच्च अग्रिम निवेश, सिस्टम की निगरानी और संचालन के लिए उच्च प्रशिक्षित कर्मचारियों की आवश्यकता, गैर–परिसंचारी जलीय कृषि की तुलना में उच्च ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन जैसे कुछ प्रमुख अवगुण हैं।

अन्तःस्थलीय क्षेत्र में आर ए एस पद्धति में तिलापिया, पंगास, कवई, पाबदा मछलियों का पालन सघन रूप से किया जा सकता है।

बायोफ्लॉक एवं पुनर्चक्रण जलीय कृषि पद्धति को सर्व सुलभ बनाने हेतु तकनीकी प्रशिक्षण तथा क्षेत्र आधारित अनुसंधान आवश्यक हैं जिससे अधिक उत्पादन कर अत्यधिक लाभ कमाया जा सके।

सरसों की फसल में कीट एवं रोग प्रबंधन

हिमांशु शेखर सिंह एवं वी. पी सिंह

हमारे देश में रबी फसलों में सरसों की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है। सोयाबीन, मुंगफली के बाद सरसों की खेती देश भर में सबसे ज्यादा होती है। खाद्य तेल के रूप में सरसों की मांग अधिक रहने के कारण पिछले कुछ वर्षो से किसानों को सरसों की खेती से अच्छा मुनाफा हो रहा है। सरसों का अच्छा उत्पादन कई कारणों पर निर्भर करता है जैसे मिट्टी जलवायु, बीज कीट एवं रोग। सरसों की फसल में समय–समय पर विभिन्न प्रकार के कीट एवं रोग काफी नुकसान पहुचाते है। जिससे उपज में भारी कमी आती है। यदि समय रहते इन कीटों एवं रोगों की पहचान कर उनका नियंत्रण कर लिया जाए तो सरसों के उत्पादन में बढ़ोत्तरी की जा सकती है। सरसों की फसल में लगने वाले कुछ प्रमुख कीट एवं रोगों के विषय में विस्तारपूर्वक जानकारी निम्नवत दी गई है।

प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

1 चैंपा या माहू– यह सरसों का प्रमुख कीट है जो कि सरसों उगाए जाने वाले सभी भागों में पाया जाता है। इस कीट के निम्फ एवं प्रौढ़ दोनों ही पौधों के विभिन्न भागों मे रस चूसते हैं तथा एक प्रकार का मीठा श्राव छोड़ते है जिससे पौधों पर काली फफूंद उग जाती है। उग्र प्रकोप होने पर पौधे सुख जाते हैं तथा फालियां नहीं बनती हैं। इस कीट के प्रकोप से उपज में लगभग 90 प्रतिशत तक तथा तेल की मात्रा में 10 प्रतिशत तक कमी आ जाती है।

नियंत्रण इस कीट की रोकथाम के लिए नियंत्रण हेतु थायमिथोक्जाम 25 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 100 ग्राम या फ्लोनिकामिड 50 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 60 ग्राम प्रति एकड़ की दर से 150 लीटर पानी के साथ छिड़काव करना चाहिए।

2. सरसों की आरा मक्खी– इस कीट की सूडी अवस्था ही क्षतिकारक होती है। इस कीट की सूड़ियो काले रंग की होती है

जिनके पीठ पर लम्बवत धारियाँ रहती है। छोटी सूड़िया पत्तियों के किनारे की तरफ से खाना शुरू कर मध्य शिरा तक खाती है। सूंडी 3–4 सप्ताह पुरानी फसल को अधिक नुकसान पहुँचाती है।

नियंत्रण– इस कीट के नियंत्रण हेतु हाइड्रोक्लोराइड 50 प्रतिशत (एस. पी.) 300 ग्राम अथवा इण्डोक्साकार्ब 14.5 प्रतिशत (एस.पी.) 150 मिली प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

3. चितकबरा कीट– यह एक सर्वभक्षी कीट है जो फसल के छोटे–छोटे पौधों को अधिक नुकसान पहुँचाता है। इसके प्रौढ़ एक शिशु दोनों ही पौधों से रस चूसते हैं। अत्यधिक प्रकोप की दशा में पूरा पौधा सूख जाता है फलियां बनने व पकने के समय इस कीट का दोबारा प्रकोप होता है। इस कीट के दोबारा प्रकोप होने के कारण उपज में लगभग 30 प्रतिशत तक की कमी आ जाती है।

नियंत्रण– इस कीट के नियंत्रण हेतु थायमिथोक्जाम 25 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी) 100 ग्राम या इमीडाक्लोप्रिड 17.8 प्रतिशत (एस.एल.) 100 मिलि प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना चाहिए।

लीफ माइनर– कभी–कभी यह कीट बहुत अधिक नुकसान पहुचाता है। यह कीट पौधों की पुरानी पत्तियों पर टेढ़ी–मेढ़ी सफेद धारियों बनाता है जिससे पौधों की पत्त्यिां क्लोरोफिल रहित हो जाती है अतः पौधा अपना भोजन नहीं बना पाता। इस कारण उपज में गिरावट आती है।

नियंत्रण – इस कीट की रोकथाम के लिए थायमिथोक्जाम 25 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 100 ग्राम या क्लौरन्ट्रानिलिप्रोल 18.5 प्रतिशत (एस. सी.) 60 मिली प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन–

1. श्वेत फफोला सरसों कुल का यह प्रमुख रोग है। इस रोग में पौधों की पत्तियों के निचले हिस्से एवं तनों पर सफेद चमकीले, अनियमित अथवा गोलाकार उभरे हुये स्फोट बनते है जो अनुकूल

कृषि विज्ञान केन्द्र बरासिन, सुलतानपुर, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

परिस्थितियाँ मिलने पर आपस में मिल जाते है एवं बड़े धब्बों का रूप धारण कर लेते है। कुछ समय बाद परपोषी कवक की बाहृय त्वचा फट जाती है जिससे पत्ती की सतह पर सफेद चूर्ण दिखाई देता है जो वास्तव में कवक की बीजाणु धनियां होती है।

नियंत्रण– इस रोग की रोकथाम के लिए बुआई से पूर्व बीज को मेटालैक्सिल+मैन्कोजेब 72 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) दवा से 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करें। खड़ी फसल में इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर साईमोक्सानिल+मैक्कोजेब 72 प्रतिशत(डब्ल्यू. जी.) 450 ग्राम अथवा मेटालैक्सिल+मैन्कोजेब 72 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 400 ग्राम प्रति एकड़ की दर से 150 लीटर पानी के साथ छिड़काव करना चहिए।

अल्टरनेरिया पत्ती धब्बा– यह रोग देश के सभी सरसों उत्पादक क्षेत्रों में देखा गया है। इस रोग के द्वारा उपज में 10 से 70 प्रतिशत तक हानि आंकी गयी है। रोग की शुरूआती अवस्था में पत्तियों पर भूरे से धूसरा रंग के धब्बे बनते है जो किनारे से पीले रंग के छल्ले द्वारा घिरे रहते है। अनुकूल मौसम में ये धब्बे आपस में मिलकर पूरी पत्ती को झुलसा देते है जिससे पत्त्यिां टूटकर अलग हो जाती है।

नियंत्रण– इस रोग के नियंत्रण हेतु हेक्साकोनाजोल कैप्टान 75 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 300 ग्राम या टेबुकोनाजोल 25.9 प्रतिशत (ई. सी.) 250 मिली प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

मृदुरोमिल आसिता– इस रोग का प्रकोप सामान्यताः आर्द्र मौसम में अधिक होता है। रोग के लक्षण पौधों पर अंकुरण के 10–15 दिन बाद हल्के पीले से सफेद रंग के धब्बे के रूप में पत्ति पर दिखाई देते है। रोग का प्रकोप तने एवं पुष्पक्रम पर होने से इनका आकार विकृत हो जाता है, तना फूला हुआ तथा पुष्प छोटे एवं सिकुड़े हुए दिखाई देते हैं। जिसकी वजह से पौधे में पुष्प बंध्यता आ जाती है एवं उपज में भारी गिरावट आती है।

नियंत्रण– इस रोग की रोकथाम के लिए बुआई से पूर्व बीज को मेटालैक्सिल+मैन्कोजेब 72 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) दवा से 2 ग्राम प्रति किग्रा बीज की दर से उपचारित करें। खेत में इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर साईमोक्सानिल+ मैन्कोजेब 72 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 450 ग्राम अथवा मेटालैक्सिल+मैन्कोजेब 72 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 400 ग्राम प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना चाहिए।

4. चूर्णिल आसित– सामान्यतः ऐसा देखा गया है कि इस रोग के द्वारा सरसों की फसल को बहुत अधिक हानि नहीं होती है परन्तु रोग के भीषण प्रकोप की अवस्था में जब पौधे की सभी पत्तियों एवं फलियां सफेद चूर्ण से ढंक जाती है तब फसल का अत्यधिक नुकसान होता है। रोग से प्रभावित पौधों की पत्तियों पर सफेद, आटे के समान चूर्ण बिखरा हुआ दिखाई देता है जो धीरे–धीरे तने एवं फलियों पर भी फैल जाता है। सामान्य तौर पर यह बीमारी वातावरण के तापमान में वृद्धि के साथ बढ़ती है।

नियंत्रण– इस रोग के नियंत्रण हेतु हेक्साकोनाजोल 5 प्रतिशत (एस.सी.) 250 मिली या माइक्लोब्यूटानिल 10 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 150 ग्राम प्रति एकड़ की से छिड़काव करें।

5. तना गलनः इस रोग के लक्षण तना, पत्तियां एवं फलियां पर दिखाई देते हैं। रोग के प्रारम्भिक लक्षण जमीन की सतह से ठीक ऊपर पौधे के तने पर जलसिक्त धब्बों के रूप में देखे जा सकते हैं। रोग की अधिकता होने पर रूई जैसी कवक की वृद्धि तनो की लम्बाई के साथ–साथ पूरे तने को ग्रसित कर देती है। ऐसी अवस्था में अंततः पौधे मुरझाकर सूख जाते है। यदि रोगग्रस्त तने को फोड़कर देखा जाए तो उसमें बहुत सारे काले रंग के गोल या अधिनियमित आकार वाले स्क्लेरोशिया दिखाई देते हैं।

नियंत्रण– इस रोग से बचाव के लिए बुआई से पूर्व बीज को कार्बेन्डाजिम 50 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) पाउडर से 2 ग्राम प्रति किया बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। खड़ी फसल में रोग के लक्षण दिखाई देने पर सर्वप्रथम रोगग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें। तत्पश्चात कार्बेडाजिम+मैन्कोजेब 75 प्रतिशत (डब्ल्यू. पी.) 300 ग्राम अथवा टेबुकोनालोज 25. 9 प्रतिशत (ई. सी.) 250 मिली. प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

फल व सब्जियों की तुड़ाई उपरान्त प्रबन्धन से करे किसान भाई आय में वृद्धि

रेनू सिंह* एवं शैलेष कुमार सिंह**

फसल कटाई उपरान्त प्रबन्धन (पोस्ट हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी) क्या हैः— फसल उत्पादन के बाद कटाई उपरान्त प्राप्त खाघान्न फसल उपरान्त के लिए अपनायी जाने वाली क्रियाएं जैसे शीतलन, सफाई, छंटाई, खाद्यान, अनाज का प्रसंस्करण, पैकिंग व भण्डारण तथा बिक्री के लिए वैज्ञानिक तकनीक का प्रयोग किया जाता है ताकि उपभोक्ताओं की खाद्य और पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके इसे ही फसल कटाई उपरांत प्रबंधन कहा जाता है कटाई/तुड़ाई का कार्य उचित समय व विधि कुल फसल उत्पादन के प्रमुख कारक हैं।

पोस्ट हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी का उद्देश्यः—

1 पोस्ट हार्वेस्ट तकनीक फसल उत्पादन और खपत के बीच होने वाले नुकसान को कम करने के लिए किया जाता है।
2 इस तकनीक द्वारा उत्पाद की सुरक्षा को बढ़ाया जा सकता है।
3 इस तकनीक से उत्पाद की गुणवत्ता, मात्रा, बनावट, स्वाद में व पोषक मूल्य में वृद्धि होती है।
4 इससे जमीन की उर्वरता में वृद्धि होती है।
5 इस तकनीक से कार्य सुगमता से होता है भूमि की उत्पादन क्षमता व गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

तुड़ाई उपरांत प्रबंधन का महत्वः— भारत फल और सब्जियों का दूसरा बड़ा उत्पादक देश है फल और सब्जियां महत्वपूर्ण पोषक तत्वों का एक समृद्ध स्रोत होने के कारण मानव पोषण का एक महत्वपूर्ण घटक है। खाद्यान, फल व सब्जियां का प्रसंस्करण कर इनकी तुड़ाई उपरांत उचित प्रबंधन द्वारा इनके पोषक तत्वों को, खाद्य पदार्थों में होने वाले नुकसान को काफी हद तक कम करके बढ़ती हुई आबादी की खाद्य और आवश्यकताओ को पूरा करने की क्षमता है।

1 इससे तुड़ाई के बाद के नुकसान में कमी आती है।
2 उत्पादन की लागत में कमी और किसान के आय में वृद्धि करती है।
3 कुपोषण को कम करना और राष्ट्र का स्वस्थ विकास सुनिश्चित होता है।
4 आर्थिक नुकसान में कमी।
5 उपलब्धता तुड़ाई के बाद की वैज्ञानिक तकनीक से सेब, केला, टमाटर इत्यादि फल व सब्जी साल भर देश में लगभग हर जगह साल भर सुगमता से उपलब्ध कराया जा सकता है।
6 रोजगार सृजनः— खाद्य प्रसंस्करण उद्योग रोजगार सृजन के मामले में पहले स्थान पर है तुड़ाई के उपरांत फल व सब्जियों के मूल्यवर्धन में लाखों लोग कार्यरत हैं।
7 आय का स्रोतः— खाद्य प्रसंस्करण आय का महत्वपूर्ण स्रोत तो है ही इनके निर्यात द्वारा भी विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है।
8 दूरस्थ सीमा क्षेत्रों, अंतरिक्ष के लोगों के लिए जल्दी न ख़राब होने वाले उत्पाद प्रसंस्कृत फल व सब्जी उत्पाद आसानी से उपलब्ध करवाया जा सकता है।
9 शिशुओं के लिए महत्वपूर्ण पोषक तत्वों से भरपूर पेय पदार्थ अर्ध व ठोस पदार्थ के रूप में प्रसंस्कृत उत्पाद उपलब्ध है। जो कि आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान भी ले जा सकते है।

कटाई/तुड़ाई के बाद उपचार :—फल व सब्जियों को नुकसान से बचाने के लिए तुड़ाई उपरांत उनका उचित रखरखाव करना बेहद आवश्यक होता है। खाद्य पदार्थों, फल व सब्जियों को खराब होने से बचाने के लिए कई क्रियाएं की जाती हैं पोस्ट हार्वेस्ट प्रबंधन में इन क्रियाओं में शामिल हैं सफाई, धुलाई, चयन, ग्रेडिंग, कीटाणु, शोधन, सुखाना, पैकिंग, भंडारण, परिवहन, विपणन इत्यादि इत्यादि। कटाई के तुरंत बाद छटाई करने का मुख्य उद्देश्य रोगी कटी चोट लगी खराब अपरिपक्व दाग वाली फल व सब्जियों को पृथक करना होता है क्योंकि यह फल व सब्जियां स्वयं तो जल्दी खराब होती हैं बाकी सब्जियों व फल को भी जल्दी खराब कर देती हैं इसका मुख्य कारण इन का तेजी से कोशिका विभाजन होता है।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, गृह विज्ञान, **अध्यक्ष एवं वरिष्ठ वैज्ञानिक, के.वी.के. हैदरगढ़, बाराबंकी, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

फल व सब्जियों का कटाई उपरांत रखरखावः–

1 तुड़ाई उपरांत फल व सब्जियों की कटाई, छटाई व वर्गीकरण और पैकिंग की क्रियाएं महत्वपूर्ण होती हैं।

2 तुड़ाई उपरांत फल व सब्जियों की उत्पादों को सुखाना, रोग रहित करना, धोना, मोम लगाना, गुच्छे बनाना, पूर्व शीतलीकरण क्रियाएं भी अति महत्वपूर्ण है।

वर्गीकरणः– फल व सब्जियों का वर्गीकरण उस के रंग–रूप आकार ठोसपन के आधार पर किया जाता है भारत में महत्वपूर्ण फलों के वर्गीकरण के लिए गुणवत्ता के आधार पर आकार के आधार पर, वजन के आधार पर किया जाता है।

1 रोग रहित करनाः–

2 रंग उपचार करनाः–

3 पूर्व शीतली करण करनाः–

रोग रहित करनाः– तुड़ाई उपरांत फल व सब्जियों को रोग रहित करना, उन में नमी की मात्रा को घटाना, सड़न गलन, को कम करने के लिए, सुक्ष्म जीवाणुओं से मुक्त करने हेतु फल व सब्जियों को अलग–अलग तरीकों से उपचारित किया जाता है। ताजे फल व सब्जियों के भंडारण जीवन को बढ़ाने के लिए दिए जाने वाले प्रमुख उपचार निम्न है :–

1 गर्म पानी में डुबोना जैसे– 1–2 मिनट के लिए गोभी, गाजर इत्यादि शिमला मिर्च को 52 डिग्री सैल्सिमरन पर 12 सेकंड के लिए डुबोना।

2 संतृप्त जलवाष्प गर्मी।

3 गर्म शुष्क का हवा प्रवाहित करना।

4 निर्जलीकरण फलों व सब्जियों को कृत्रिम रूप से मशीन द्वारा सुखाना इस क्रिया को निर्जलीकरण कहते हैं।

5 सोलर ड्रायर :– फलो व सब्जियों को सौर उर्जा द्वारा सुखाना।

पूर्व शीतलीकरणः– ग्रीष्मकालीन ताजी सब्जियों व फलों का तापमान तुड़ाई उपरांत पूर्व शीतलीकरण क्रिया द्वारा कम किया जाता है इससे उत्पाद के प्रक्षेत्र तापमान को कम किया जा सकता है उचित लाभ लेने के लिए ताजे फल व सब्जियों के भंडारण व परिवहन के लिए प्रशितलित वहन (रेफ्रिजरेटेड वैन) का कम तापक्रम पर उपयोग करना आवश्यक होता है।

धुलाई प्रक्रियाः– ताजे फल व सब्जियों की तुलाई उपरांत तुड़ाई एक आवश्यक प्रक्रिया है धोने से इनके ऊपर लगे मिट्टी धुल व दवाई स्प्रे के सूक्ष्म कण भी साफ हो जाते हैं जड़ व गांठ वाली सब्जियां जैसे– गाजर, मूली, आलू, चुकंदर, सूरन, हल्दी, अदरक इत्यादि की धूल मिट्टी साफ हो जाती है।

- प्याज, खीरा, शकरकंद, तरबूज, खरबूजा, लहसुन, को शुष्क धुलाई विधि द्वारा साफ किया जाता है।
- नाजुक फल जैसे– स्ट्रॉबेरी के लिए यह धुलाई प्रक्रिया नहीं अपनाई जाती है।
- पैकिंग व परिवहनः– सही पैकिंग व परिवहन करने से उत्पादों की गुणवत्ता बनी रहती है।
- वैज्ञानिक विधि से भंडारणः– इससे उत्पाद लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।
- गैर मौसम विक्रय :– उचित मूल्य मिलने पर उत्पाद को गैर मौसम में विक्रय करने से ज्यादा मूल्य प्राप्त होता है।

किसान भाई ऐसा ना करें

रंग उपचार करनाः– फलों का बाजार मूल्य बढ़ाने के लिए कुछ फलों को उनके विशेष गुणों के आधार पर रंग प्रदान करने के लिए कृतिम रंगों से उपचार किया जाता है किसान भाई ऐसा न करे क्योकि स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

मोम लगानाः– फलों में सब्जियों में सड़न को रोकने के लिए किसान भाई व्यापारी इन पर मोम की परत चढ़ा देते हैं जिससे यह सुंदर व चमकदार हो जाते है। लेकिन यह मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, इस लिए किसान भाई ऐसा न करे।

इस प्रकार किसान भाई फसल कटाई/तुड़ाई उपरांत उचित प्रबंधन कर उत्पादन से उत्पाद के उपयोग होने के बीच के नुकसान को कम कर उत्पाद का अच्छा मुनाफा प्राप्त कर सकते हैं उत्पाद की पोषकता बनी रहती है साथ ही देश की बड़ी आबादी तक आसानी से खाद्यान्न उपलब्ध होता है इस प्रकार भुखमरी, कुपोषण की समस्या को काफी हद तक दूर करने में सहायता मिलती है। किसान भाइयो द्वारा फल व सब्जियों का कटाई/तुड़ाई उपरान्त उचित प्रबंधन करने से उनकी आय दुगनी होती है और आर्थिक रूप से संपन्न होते है।

अन्तरावस्था काल के दौरान दुधारू पशुओं की सरल प्रबंधन रणनीतियां

अमित कुमार सिंह* एवं संजीत कुमार**

हाल ही में किये गए कई शोध परीक्षणों में यह ज्ञात हुआ कि अन्तरा वस्था काल के दौरान दुधारू पशु अपनी शारीरिक क्षमता के अनुसार प्रदर्शन कर पाता है। अन्तरा वस्था काल पशुओं में ब्यांत से 21 दिन पहले एवं बाद के कालकों समझा जाता है। अन्तरावस्था काल के दौरान दुधारू पशुओं की उचित देखभाल करना बहुत जरूरी हो जाता है। इस अवस्था के दौरान किये गए प्रबंधन का असर आगे आने वाले लम्बे समय तक रहता है। कई शोध कार्यो में यह पाया गया कि जिन पशुओं का रख– रखाव अन्तरा वस्था काल के दौरान बेहतर रहा वे पशु अन्य पशुओं कि तुलना में प्रभावी रूप से बेहतर रहे। इसके साथ ही उन पशुओं का शारीरिक रख रखाव भी अच्छा पाया गया। इस लेख में कुछ मुख्य एवं सरल बिंदुओं को बताया गया है जिन प्रबंधन तकनीकों को अपना कर बेहतर गुणवत्ता युक्त दुग्ध कि प्राप्ति के साथ पशुओं में बेहतर स्वास्थ को बनाये रखा जा सकता है।

यह समय पशुओं के लिए अति महत्वपूर्ण हो जाता है। ऐसे समय में समय पशु बिना दुग्ध उत्पादन की अवस्था से दुग्ध उत्पादन करने कि अवस्था में प्रवेश करता है। इस दौरान पशुओं के शरीर में नाटकीय बदलाव होते हैं, जिसमे मुख्यतः खाद्य ग्राह्यता में भारी गिरावट, रोग–प्रतिरोधक क्षमता मेंकमी, शारीरिक अवस्था में कमी, इत्यादि हैं।इन परिस्थितियों से बचने के लिए बेहतर प्रबंधन तकनीकों को अपनाना जरुरी हो जाता है।

खाद्य ग्राह्यता में कमी

यह लाजमी है कि जिस प्रकार का पौस्टिक खाद्य जानवर ग्रहण करते हैं वैसा ही उनका प्रदर्शन होताहै। अन्तरा वस्था काल में खाद्य ग्राह्यता में लगभग 30 प्रतिशत तक गिरावट देखने को मिलती है। इसलिए हमारी प्रबंधन नीतियों को इस प्रकार होना चाहिए जिससे पशु सही मात्रा में गुण वत्ता युक्त पोषण प्राप्त कर सके।

अन्तरा वस्था काल में पशुओं का उचित प्रबंधन न करने से होने वाली समस्याएं

अन्तरावस्था काल में अनुचित प्रबंधन से कई समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं जिसमे मुख्यतः शारीरिक क्षति, दुग्ध उत्पादकता में कमी, उत्पादित दुग्ध कि गुणवत्ता में कमी, प्रजनन क्षमता में कमी, बिमारियों का होना जिसके फलस्वरूप आर्थिक हानि होती है और किसान को आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है।

अन्तरा वस्था काल में कि जाने वाली उन्नत प्रबंधन नीतियां

पोषणः चूँकि पशुओं और उनके अजन्मे बच्चों को जरुरी पोषण कि मात्रा में 25–30 प्रतिशत ज्यादा बढ़ जाती क्योंकि पशु की अपनी शारीरिक अवस्था के साथ साथ उसके गर्भ में पल रहे बच्चे को सही पोषण मिलता रहे। इसलिए अन्य दिनोंकिअपेक्षाइस 42 दिन के समय में मिश्रित दाने कि मात्रा 25–30ः बढाकरदेनाचाहिए। ध्यान रहे कि हरा एवं सूखा चारा सही अनुपात में और उचित मात्रा में रहे।

पशुओं को सही अनुपात में दाने और चारा देना

अच्छी तरह से मिश्रित एवं पर्याप्त मात्रा में सूखा एवं हरा चारा प्रदान करने के साथ पशुओं को दाना देना चाहिए। प्रायः किसान अन्तरा वस्थीय काल में पशुओं को दाना नहीं देते हैं क्योंकि पशु उस समय दुग्ध उतपादन नहीं करते हैं। इसलिए प्रति 100 किलो शारीरिक भार पर 2.5–3 किलो शुष्क खाद्य देना चाहिए। इससे पशु के साथ उनके गर्भ में पल रहा बच्चा भी स्वस्थ रहता है। ध्यान रहे कि अत्यधिक सूखा, हरा या दाना नहीं देना चाहिए। सूखे एवं हरे चारे का सही अनुपात (30 रू 70 –40 रू 60) होना चाहिए। साथ ही साथ यह ध्यान रखना चाहिए कि शुष्क खाद्य में दाने एवं चारे का अनुपात (30 रू 70 –40:60) रखना चाहिए।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ, **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, अमेठी, जौनपुर–2 आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश) 224229

पशुओं को वसा कि आपूर्ति

दुग्ध में काफीमात्रा (3–7:) में वसा पाई जाती है जो कि एक ऊर्जा का श्रोत है। अतः खाद्य सामग्रियों में वसा की मात्रा अन्तरावस्था काल में बढ़ा देनी चाहिए ताकि पशुओं को खाद्य के साथ वसा कि उचित आपूर्ति हो सके। इसके लिए वनस्पति तेल (सोयाबीन, सरसो, सूर्यमुखी, इत्यादि) का प्रयोग खाने में मिलाकर किया जा सकता है। अन्तरावस्था काल के कुल 42 दिनों के दौरान 50 से 250 मिलीलीटर तेल 250–400 किलो शारीरिक भार के हिसाब से प्रतिदिन दिया जाना चाहिए। इससे जो शारीरिक अवस्था में गिरावट अक्सर देखने को मिलती है, उसमे काफी कमी आती है और स्वस्थ्य के साथ बेहतर दुग्ध उत्पादन देखा गया है।

पशुओं को आवश्यक विटामिन एवं खनिज तत्वों कि आपूर्ति

मुख्यतः विटामिन ई विटामिन ए, सी, डी जरूरी विटामिन माने जातें हैं। वही खनिज तत्वों में सेलेनियम, जिंक और कॉपर इत्यादि हैं।पुरे शुष्क खाद्य के लिए मिश्रित दाने में इन विटामिनो और खनिज तत्वों का समावेश आवश्यक है। मिश्रित दाने में 2 प्रतिशत इन विटामिनो एवं खनिज तत्वों कि मात्रा अच्छी मानी गयी है। ध्यान रहे कि मिश्रित दाने में 1: खाने का नमक शामिल होना चाहिए।

शारीरिक संरचना की देखभाल

अत्यधिक मोटापा या पतलापन पशु के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। खासकर अन्तरावस्था काल में पशुओं कि शारीरिक बनावट इन दोनों अवस्थाओं के मध्य होनी चाहिए। शोधोंमें यह पाया गया है जिन पशुओं कि शारीरिक अवस्था बी०सी० यस० (बॉडी कंडीशन स्कोर) 3.5 (1– 5 कि स्केल) के आस पास रही उन पशुओं का प्रदर्शन हर मामले में बेहतर रहा। उन स्वस्थ पशुओं ने बेहतर दुग्ध उत्पादन किया और ब्यांत के बाद शारीरिक क्षति भी कम हुई। बेहतर शारीरिक स्थिति में रहने वाले पशुओं की प्रजनन क्षमता बेहतर रही और प्रसव सामान्य पाए गए।

पशुओं को सही बाड़ा एवं नियंत्रण प्रबंधन करना

अन्तरा वस्था काल में पशु काफी संवेदनशील होते हैं इसलिए उनका सावधानी से ध्यान रखना चाहिए। पशुओं को मुख्यतः आरामदायक, हवादार, फिसलनरहित, चारे–पानीको बढ़ावा देने वाला और पशु शाला में होने वाले श्रम को सही से संचालित करवाने वाला होना चाहिए।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि अन्तरावस्था काल में सही प्रबंधन आवश्यक होताहै। इस काल में किये गए प्रबंधन का परिणाम दूरगामी होता है। बेहतर प्रबंधन रणनीतियां जिनमे उचित पोषण, सही देखभाल, सहीबाड़ा एवंनियंत्रण प्रबंधन, इत्यादि करने से किसान अनचाहे परिणामो से बचकर बेहतर उत्पादन, गुणवत्ता, शारीरिक रख–रखाव प्राप्त कर अपनी आय को बढ़ा सकता है जिससे वह शशक्त होने के साथ साथ दूसरे किसानो के लिए मिसाल बन सकता है।

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रू0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है। जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

फरवरी माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में
डॉ. सौरभ वर्मा
सह प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

(1) समय से बोये गये गेहूँ में अवस्थानुसार नत्रजन की शेष मात्रा की टाप ड्रेसिंग करें।

(2) जिस फसल में बालियाँ निकल आई हैं और उनमें कुछ काली बालियाँ दिखायी दें तो उन्हें निकालकर नष्ट कर दें या गाड़ दें।

सब्जी एवं उद्यान में
डॉ. अश्वनी कुमार सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ (उद्यान विज्ञान)

(1) गर्मी वाली बैंगन की पौध जो नवम्बर माह में डाली गयी थी उसकी रोपाई लम्बी किस्म में 60 गुणा 60 सेमी तथा गोल वाली किस्म में 75 गुणा 75 सेमी पर करें।

(2) गर्मी वाली मूली पूसा चेतकी किस्म की बुवाई करें।

(3) लोबिया की पूसा कोमल, पूसा फागुनी, ऋतुराज 1552 किस्मों की बुवाई 20 किग्रा नत्रजन, 50 किग्रा फास्फोरस तथा 30 किग्रा पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से कूड़ों में डाल कर करे।

(4) इस माह में भिण्डी की परभनी क्रान्ति, पूसा सावनी पंजाब–7 प्रजातियों की बुवाई 20–25 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बीज को 2 ग्राम कैप्टान या थीरम से प्रति किग्रा बीज उपचारित करने के बाद करें।

(5) आम में खर्रा रोग की रोकथाम के लिए 2 ग्राम घुलनशील गंधक अथवा कैराथेन एक मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

(6) आम के पाँच वर्षीय पेड़ में 25 किग्रा गोबर, 250 ग्राम नाईट्रोजन, 125 ग्राम फास्फोरस तथा 250 ग्राम पोटाश मिट्टी में मिलाकर गुड़ाई कर देना चाहिए तथा नमी के कमी की दशा में सिंचाई आवश्यक है।

पौध संरक्षण
डॉ. वी. पी. चौधरी एवं डॉ. पंकज कुमार
सहायक प्राध्यापक

(1) गेहूँ में झुलसा एवं गेरूई रोग के नियंत्रण के लिए 0.2 प्रशित डाइथोन एम–45 अथवा प्रोपीकोनाजोल 0.1 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।

(2) मटर में बुकनी रोग के नियंत्रण के लिए घुलनशील गंधक के 0.3 प्रतिशत अथवा कैराथेन के 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

(3) तिलहनी फसलों में झुलसा, सफेद, गेरूई एवं तुलासित रोग नियंत्रण के लिए डायथेन एम–45 के 0.2 प्रतिशत के घोल का छिड़काव करें।

(4) प्याज की बैंगनी धब्बा रोग के नियंत्रण के लिए 0.3 प्रतिशत ताम्रयुक्त रसायन के घोल का छिड़काव करें।

(5) आम के भुनगा कीट नियंत्रण के लिए मोनोक्रोटोफास अथवा मेटासिस्टाक्स 1 से 1.25 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

पशुपालन
डॉ. सुरेन्द्र सिंह
विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

(1) गर्भित तथा शीघ्र ब्यायी भेड़ों की उचित देखभाल किया जाये।

(2) मुर्गियों से अच्छा उत्पादन लेने के लिए उन्हें पौष्टिक आहार के साथ–साथ बरसीम घास भी दिया जाये।

(3) मुर्गियों का उत्पादन स्तर तथा अच्छी वृद्धि बनाये रखने के लिए बिछावन की प्रतिदिन सफाई किया जाये तथा सप्ताह में कम से कम दो बार उसकी गुड़ाई अवश्य किया जाये।●

संकलनकर्ता : डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : अमरूद की खेती कैसे करें?
(श्री अशोक कुमार पाण्डेय, सरतरपुर, जनपद अमेठी)

उत्तर : इलाहाबाद सफेदा, लखनऊ–49, चित्तीदारर लालगूदे वाला, बेदाना अमरूद की प्रमुख किस्में हैं। इसके पौध लगाने का उपयुक्त समय जुलाई–अगस्त का महीना है। पौध लगाने के लिए 75 सेमी लम्बे और 75 सेमी चौड़े तथा एक मीटर गहरे गढ्ढे खोदकर 15–20 दिन तक खाली छोड़ देना चाहिए। इसके बाद उनमें सड़ी गोबर की खाद और मिट्टी बराबर मात्रा मे मिलाकर गढ्ढे में भरकर सिंचाई कर देना चाहिए। इस प्रकार तैयार किये गये गढ्ढे में पौध लगाना चाहिए।

प्रश्न : पपीते के पौधों में फल गुच्छेदार हो रहा है इसकी रोकथाम कैसे करें?
(श्री शेष कुमार पाण्डेय, हुसईमुकुन्दपुर, जनपद सुल्तानपुर)

उत्तर : यह विषाणु रोग का लक्षण है जिसके कारण पौधों की वृद्धि रूक जाती है और फूल–फल नहीं लगते। इसकी रोकथाम के लिए प्रभावित फल को काट कर जमीन में दबा दें। पपीता के बाग में जल निकास का उचित प्रबन्ध रखें और जून–जुलाई में कीटनाशी दवा का एक या दो छिड़काव कर देना चाहिए।

प्रश्न : सरसों की खड़ी फसल में माँहू का कीट नियंत्रण कैसे करें?
(श्री महेन्द्र प्रताप सिंह, सेयरी बाजार, जनपद सुल्तानपुर)

उत्तर : सरसों की खड़ी फसल में माँहू के कीट नियंत्रण हेतु मैलाथियान 50 ई.सी. की दो लीटर दवा अथवा इन्डोसल्फान 35 ई.सी. की सवा लीटर दवा 750 लीटर पानी मे घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

प्रश्न : आम में बौर आने वाले है उन दवा कैसे छिड़कें या बिना छिड़के उपचार हो सकता है?
(श्री गिरिराज वर्मा, बीकापुर, जनपद अयोध्या)

उत्तर : आम के बौर को खर्रा रोग तथा भुनगा कीट से बचाने के लिए बौर आने के बाद, परन्तु फूल खिलने से पहले 2 ग्राम घुलनशील गंधक (सल्फेस) तथा 0.5 मिली इमिडाक्लोराइड प्रति लीटर पानी मे घोलकर छिड़काव करें। दूसरा छिड़काव 1 मिली कैराथेन+1 मिली मेटासिस्टाक्स अथवा इन्डोसल्फान का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर फल टिकाव के बाद करें।

प्रश्न : गेहूँ में बथुवा अधिक होता है इसकी रोकथाम कैसे करें?
(श्री राम सुमिरन, हसनपुर, रानीगंज, जनपद अमेठी)

उत्तर : गेहूँ की फसल की 35 दिन की अवस्था पर 2,4 डी. सोडियम सॉल्ट 80 प्रतिशत की 625 ग्राम मात्रा को 500 से 600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव कर सकते हैं। परन्तु इससे अच्छे परिणाम के लिए 2,4 डी 200 ग्राम सक्रिय पदार्थ के साथ आइसोप्रोट्यूरान 500 ग्राम (सक्रिय पदार्थ) प्रति हेक्टेयर 600 से 800 लीटर पानी में घोलकर उक्त अवस्था पर छिड़काव करने से गेहूँ की फसल की अधिकांश खरपतवार समूल नष्ट हो जाती है।

प्रश्न : दुधारू पशुओं को संतुलित आहार (दाना) कितनी मात्रा में दें?
(श्री जगदम्बा यादव, अमानीगंज, जनपद अयोध्या)

उत्तर : दुधारू पशुओं को संतुलित आहार की मात्रा उनके दुध उत्पादन की क्षमता के ऊपर निर्भर करता है। दुधारू भैंस को 2.5 किग्रा दुग्ध उत्पादन पर 1 किग्रा दाना तथा गाय को 3 किग्रा दुग्ध उत्पादन पर 1 किग्रा दाना देना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त 1 से 1.5 किग्रा दाना उसके स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए अतिरिक्त देना आवश्यक है। ●

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित